अध्यात्म संग्रह ।

इस पुस्तक का जैसा नाम है तैसाही गुण है इसमें अध्यात्म वैराग की भरी हुई छोटी वडी २८ पुस्तकें हैं जिनके विपय और आशय को बहुत अच्छी तरह से समझ कर सारी ही पुस्तकें कठाग्र करने योग्य हैं लेकिन जो साहिब सारी कठाग्र नहीं कर सकें जिस २ विपय की जो २ पुस्तक पसंद करें सो २ कंठाग्र जरूरही करें और उसके अध्यात्मरस का अनभौ करके आनद लें और अपनी सम्यक्त को शुद्धि करके प्रणामोंको ससार से विरक्त करें तो यह सेवक अपने परिश्रम को सफल समझेगा ।

इसको सर्वत्र श्रावकों का दास एक जैनी ने छपवाया जिस को चाहिये

उम्मेदसिंह मुसद्दीलाल जैनी

अमृतसर से मगालें। प्रति १००० छपी-

श्रावणश्रीवीरनिर्वाण सम्वत् २४३३] [१९०७ ई०

पञ्जाब एकानोमीकल यन्त्रालय लाहोरमें प्रिंटर लाला लाभमणि जैनी के अधिकार से छपा ।

कर सक्ता है,भूपन ले सक्ता नाहीं ॥ दायेदार वटा नहीं सक्के कभी न क्षय होता भाई ॥ जहां जाय तहां सग चलत हैं, मित्र गणों से अधकाई ॥ दान दिये से दिन२ वढ़ता,इत्यादिक गुण अधिकारे ॥ वक्त गये फिर हाथ न आवे,लूटो हो लूटनहारे० विद्या०१॥ चमतकार जो नये २ इस, जग में देखत हो भाई । सो सव विद्या का वल जानों, और नहीं कोई चतुराई । विद्याधन से जी चाहे सो, कर देखो तुम प्रभुताई । इसभव जस फैले विद्या से, परभव में शिव सुखदाई ॥ ऐसा उत्तम धन इस जगमें,अन्य कोई नहीं मिलता रे । वक्तगये फिरहाथ न आवे, लूटो हो लूटन हारे० विद्या०२॥सस्कृत विद्या ही इस जगमें, सवकी मा कहलाती है । इस को भली भांत पढने से सव विद्या आजाती है । जो तनमन से करे परिश्रम, उन से यह प्रीत जनाती है ॥ पढने में जो आलस करते, उनको कभी न आती है । जो नर विद्या नहीं पढतेहैं वे नर भव२ दुखियारे वक्त गये फिर हाथ न आवे, लटो हो लूटन हारे०विद्या॥३॥ जो वालकको मात पिता यत्नों से,नहीं पढातेहैं । वे उस वालक के दुशमन हैं, मातपिता न कहाते हैं॥विद्वानों में मूरख लड़के, शोभा किस विध पाते हैं । जसे वगले हंसन माहीं, वैठे नहीं लजाते है ॥ तातें पढो पढ़ावो सवजन,विद्या दान करोसारे ।

बाल गये फिर हाथ न आवे छूटो हो सूटन हारे० ॥ विद्याभ्यास को छोड़ विद्या पढ़े उसी की आकुलता सब मिट जावे। विद्वानों में होय प्रतिष्ठा, सुख संपति अधिकी पावे ॥ जो नर विद्या नहीं पढ़ते हैं वे नर जग में भटकावें। जो बालकपढ़तेहैं विद्या,ते भवसागर तिर जावेंगे।अभ्यासकाल बीत यो आयत,अवसर लगा सुभगो प्यारे। बाल गये फिर,हाथ न आवे,छूटोहो छूटन हारे विद्या०॥५॥सुविद्या धनं परमधनं केवल लाभ कारनम दोहे—नृपति पद और विद्या कबहु, होत न एक समान। नृपति पूज्य निज देस में सब जग विद्यावान ॥ १ ॥
परनारी को मात सम परधन धूर समान।
सब जीवन को आप सम गिनै सो पंडित जान ॥ २ ॥
विद्या से सब होत हैं धनी और गुणवान।
बिन विद्या जे नर रहे वे नर पशु समान ॥ ३ ॥
राजमान धन संपदा विपद समै तज जांहि
इक विद्या विपदा समैं तजे न नर की बांहि ॥ ४ ॥
ताते कोटि उपाय कर विद्या पढ़ो सुजान।
उभय लोक यश सुख लहे होय सदा गुणवान ॥ ५ ॥
आहार निद्रा भय मैथुनंच सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणाम
धर्मोहितेषा मनुष्येष्विषा धर्मेण हीना पशुभी समाना।

॥ ॐ नमःसिद्धेभ्यः ॥

बारहखड़ीसूरत

॥ दोहा ॥

प्रथम नमूं अरहंत को, नमूं सिद्ध आचार
उपाध्याय सर्व साधु को, नमूं पंच परकार ॥१॥
भजन करूं श्रीआदि को, अंत नाम महावीर।
तीर्थंकर चौबीसको, नमूं ध्यान धर धीर ॥२॥
जिनध्वनि तैं वाणी खिरी, प्रगट भई संसार।
नमस्कार ताको करूं। यकचित्तयकमनधार॥३
ता वाणी के सुनत ही, बाढ़ै परमानन्द।

१। आचार=आचार्य। २। जिनध्वनि=श्री तीर्थंकर महाराजों की दिव्य धुनि से वाणी खिरी।

हुई सुरत कछु कहनको, बारासदी,के छंद॥४॥
बारासडीके छद बनाऊ, यह मेरे मन भाई।
जो पुराण में जाय बखानी,सो मैंने सुनपाइ ५
गुरुप्रसादभव्यनकीसगत,यह उपजी चतुराई।
सूरत कहे बुद्धि है थारी,श्रीजिननाम सहाई ६

॥ कक्का ॥

कका करत फिरो सदा, जामन मरण अनेक
लख चौरासी में रुलो, काज न सुधरो एक
काजनसुधरो एक दिवाने,तें शुभअशुभ कमाये
तेरी भूल माह दु:ख देखे बहुतेरे दु:ख पाये
भटकतफिरा चहुंगतिभोतर, काळअनंत गमाये
सूरतसतगुरु सीख न माना, तातें जग भरमाये
भर सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न आणी
छाड सकल मिथ्यात्व भजो श्रीजिनकी वाणी

[illegible]

॥ खखा ॥

खखा खूबी मत तजो, संसारी सुख जान
यह सुख दुःखकी खान है,सत्गुरु कही बखान ।
सत्गुरुकहीवखानजान यह,तू मतहोय अयाना
विनाशीकसुखइंद्रिन का यह,तैं मीठा कर जाना
यहसुखजानखानहैदुःखकी,तूक्यों भर्मभुलाना
सूरत कहे सुनोरे प्राणी, तू क्यों रहा लुभाना
अरे सुन मूर्ख प्राणी,धर्मकी सार न जानी०॥

॥ गगा ॥

गगा गुरु निर्ग्रंथ की, सद् बाणी मुख भाष
और विकार सकल तजो, यह थिरता मन राख
यहथिरतामनराखचाखरस,जोअपना सुखचाहे
और सकल जंजाल दूरकर, ये बातें अवगाहे[२]
पांचों इंद्रिय बश कर राखो, कर्म मूल को दाहे

२। अवगाहे = अच्छी तरहसे करना।

सूरत चेत अचेत होय मत, अवसर बीता जाहे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी०॥

॥ घघा ॥

घघा घाट सुघाट में, नाव लगी है आय
जो अब के चेते नहीं, तो गहरे गोते खाय
गहरे गोते खाय जायजब, कौन निकासनहारा
समयपाय मानुष गति पाई, अजहूं नाहिंसभारा
बार बार समझाऊ चेतन, मानो कहा हमारा
सूरत कही पुकार गुरुने, यों होवे निस्तारा[१]
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी०॥

॥ नना ॥

नना नाता जगत् में, अपस्वार्थ सब कोय
आन भीड़ जा दिन पड़े, कोई न साथी होय
कोई न साथीसगासगाथी, जिसदिनकालसतावे

१ निस्तारा = जन्ममरणसे छूटना।

सब परिवार अपने सुखकाहै, तेरेकाम नहीं आवे
जैसे ज्ञान ध्यान तू कर है, तैसा ही सुख पावे
सूरत समझ होय मतबौरा, फिर यह दाव[४]नपावे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सार न जानी०॥

॥ चचा ॥

चचा चंचल विकल मन, तिस मनको वश आन
जब लग मन बशमें नहीं, काज न होय निदान[५]
काजन होयनिदानजानयह, मन बशमेंनहीं तेरा
पांचो इंद्री छठा और मन, तिनका त भया चेरा
राग द्वेष अर मोह समीपीइन्होने आ मिल घेरा
सूरतजिसदिनमनथिरहोगाउसदिनहोय निवेरा
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी०॥

४। दाव=मौका।

५। निदान=मर्म्म। निवेरा=आवागमन निबड़ेगा।

॥ छछा ॥

छछा छे रस स्वाद में, रहो छहों रतिमान
छकत रह्यो छाड़त नहीं, समझत नहीं अज्ञान
समझत नाहिंअज्ञान पायपह,इनस्वादनमेंराखे
दहीदूधघी तेल नमक और,मीठा खाखा माखो
आर्त्त चिंता लागरही है, ज्ञानध्यान को काचो
सूरतफिरोचहुंगतिभटकम,सत्गुरुमिलोनसाचो
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सार न जानी०॥

॥ जजा ॥

जजा जाग सुजान नर, यह जागन की बार
जो अब के जागे नहीं। फेर न होय सभार
फेर न होय सभार जानयह,जो अबके नहि जागे
जो जागे निरभय६ पद पावे, जरा७ मरण भयभागे

६। निर्भय – जन्ममरणके भय से रहित अर्थात मुक्ति पद
७। जरा – बुढ़ापा।

नातर फेर फिरे भवसागर, हाथकछु।नहि लागे
सूरत होय भला जब तेरा, संसारी सुख त्यागे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सार न जानी०॥

॥ झझा ॥

झझा झाड पिछोड़ कर, कहूं तोहि समझाय
जामें तैं वासा किया, सो तेरी नहि काय
सो तेरीनहि काय जाय संग, तुझे अकेला जाना
तैंने घर बहुतेरे कीने, आवत जात भुलाना
थावर त्रस पक्षी मानुष भया, देवकहाया दाना
सूरत छहों काय तैं भुगती, आपा नहीं पिछाना
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी०।

॥ नना ॥

नना नरपद है भला, ऐसा और न कोय
जे संभले ते तिर गए, भवसागर से सोय
भवसागर से तिरे बहुतेरे, जे इसवार संभारे

तीन काल जिन सही परीषह,कर्म चूर कर डारे
आवन जान जगत्‌सा धीता,लोका लोक निहारे
सूरत जों ऐसा सुख चाहे, तू भी चेत अयारे
अरे सुन मूर्ख प्राणी । धम्म की सारन जानी०

॥ टहा ॥

टहा टारा; जिन कियो । ते बहुत रुले ससार
फिरे जगत् में भटकते, तिन को वार न पार
तिनको वार न पार कहूं,वे फिरते फिरे विचारे
नर तिर्यंच नरक देवगति, चारों धाम निहारे
जामन मरण भरे बहुतेरे, सहे महा दु ख भारे
सूरत कौतुक आप कमाये, कापे जाय, टारे
अरे सुन मूर्ख प्राणी । धर्म्मकी सारन जानी०॥

८। वार न पार — कुछ ठिकाना वार नहीं है वे कितना काल संसार में रहेंगे ।

॥ ठठा ॥

ठठा ठिठक रहो कहा। वेग ही करो संभाल
छोड ठाठ संसार को, ज्यों टूटे जग जाल
ज्यों टूटे जगजाल बावरे, बहुर नहीं दुखपावे
सत्गुरुकहीमान सो शिक्षा,फिर नहिआवेजावे
छोड़ोसंग कुमतिगणिका९को,जो तुमको बहकावे
सूरतसंग सुमतिका कीजे,शिवपुर आन दिखावै
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सारन जानी० ॥

॥ डडा ॥

डडा डगमग तुम तजो, अडिग होय पद साध
दृढ़ता कर परणाम की, ज्यों सुख लहे समाध
ज्यों सुख लहेसमाधि बादतज,आपाखोजोभाई
सिद्ध रूप तेरे घट भीतर। कहां ढूण्डणे जाई
जड़ चैतन्यभिन्न जानोतुम,मिटे कर्म दुखदाई

९। कुमतिगणिका = खोटी बुद्धिरूप वेश्या (रंडी।

सूरत आप आपको साधो, ऐसे गुरु फरमाई
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सारन जानी०॥

॥ ढढा ॥

ढढा ढेरी छाडदे, इनके ढिग मत जाय।
कुगुरु कुदेव कुज्ञान को, तू मत चित्त लगाय
तू मतचित्तलगायमावतज, कुगुरुकुदेवकुज्ञानी
यह तोकोदुर्गति दिखलावें, सोदुखमूलनिशानी
इनसेंकाज एक नहि सुधरत, कर्म भरमके दानी
सूरततजिये प्रीतिइन्होंकी, सत्गुरु आप बखानी
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सारन जानी०॥

॥ णणा ॥

णणा रण[10] ऐसा करो, सबर शस्त्र संभार
कर्म रूप ये अरि[11] बड़े, तीर ताक कर मार
तीर ताक कर मार धीरतिन्हें, कर्मरूप अरिसोई

(१०) रण—लड़ाई। (११) अरि—दुश्मन।

ये अनादि के हैं दुख दाई, तेरी जाति विगोई
नारायण अरुप्रतिहर चक्री, यातैं बचा न कोई
सूरतज्ञानसुभटजिनजागो,तिन याकीजड़खोई
अरेसुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी०॥

॥ तता ॥

तता तन तेरा नहीं, तामे रहो लुभाय
नाता तोड़ो छिनक में, ताहि कहा पतियाय
ताहि कहा पतियाय पायसुख,होयरहोयावासी
क्षणमें मरे क्षणकमें उपजे, होय जगत्में हांसी
याकेसंग बढ़ै ममता बहु,पड़े महादुःख फांसी
सूरत भिन्नजानइसतनको,यासे होय उदासी
अरे सुन मूर्ख प्राणी,धर्म्मकी सारन जानी०॥

॥ थथा ॥

थथा थिरपद जो चहे, यों थिरपद नहीं होय
जाके घट थिरता प्रगट, थिरपद परसे सोय

थिरपद परसे सोय होय सुख,गति चारोंसे छूटे
ज्ञान ध्यान को करहै जोमन, कर्मअरिनकोकूटे
यह जगजाल अनादिकालको,सोछिनमाहिंदूटे
सूरत जो थिरपदको परसे,शिवपुरके सुख लूटे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सारन जानी०।

॥ ददा ॥

ददा द्रव्य छहों कहे, प्रगट जगत् के माहि
और द्रव्य सब क्षय हैं, ज्ञानी मानत नाहि
ज्ञानी मानत नाहि द्रव्य छे, जेधासुन केजानो
माटी भूमिगोलकी शोभा, जगमें प्रगट बखानो
पुद्गलजीव अधर्म धर्म अर कालअकाश प्रमानो
सूरत इन द्रव्यनकी चर्चा,ज्ञानी गिने खजानो
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जाणी०॥

शिवपुर =मोक्ष।

॥ धधा ॥

धधा ध्यान जगत् विषे, प्रगट कहे हैं चार
आर्त्त रौद्र धर्म शुक्ल, जिनमत कहे विचार
जिनमत कहे विचार चार ये, ध्यानजगत्केमाहि
आर्त्तरौद्र अशुभके करता, इनसे शुभगतिनाहि
धर्मध्यानकेधारक जे नर, शुभसुखहोत सदाही
सूरत शुक्ल ध्यानके करतासो शिवपुरको जाहीं
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सारन जानी०॥

॥ नना ॥

नना नाशे मरण जब, नेह धरे निज माहि
नटकी कला जगत् विषे, नेह धरे निज नाहि
नेह धरेनिजमाहि जगत्में, आपा नाहि फंसावे
ज्योंपानी बिचरहे कमलतरु, जलभेदननहिपावे
शुभ और अशुभएकसेजाने, रीझ नहीं पछतावे
सूरत भिन्न लखेऐसी विधि, कर्मनहिढिगआवे

अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकी सारन जानी०।।

॥ पपा ॥

पपा; प्रभु अपने लखो, पर संगत दे छोर
पर संगत आश्रव वन्धे, देय कर्म झकझोर
देयकर्मझकझोरजोरकर,फिरनिकसन नहिपावे
आश्रव बधकी पड़ी बेड़िया,लागेकोईन उपावे
तातें प्रीति धरो सयमसें, हितकरहै दिल जोवे
सूरत यों संवर को कीजे, कर्म निर्जरा होवे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी

॥ फफा ॥

फफा; फूलो ही रहे, फोकट देख न भूल-
फांसी फंद अनादि की कर, तोड़न को शूल
कर ताड़नको शूलभूल मत, दाय भलातें पाया
भ्रमतभ्रमते भवसागरमें,मानुष गतिमें आया
याही गतिमें भये तीर्थंकर,केवल ज्ञान उपाया

सूरत जान बझ मत चूके, दाव भला तैं पाया
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी०॥

॥ बबा ॥

बबा व्यसन कुव्यसन हैं, इनसातनको त्याग
पांचों इंद्रिय वश करो, शुभ कारज को लाग
शुभकारजको लाग दिवाने, व्यसनसातयेभारी
जूवा मांस मद वैश्या चोरी,और खेटक[1] परनारी
भला चाहेतो त्याग इन्हेंतू, ले ये वरतअवधारी
सूरत इसभवमें सुखपावे,परभव[2] सुखअधिकारी
अरे सुन मूर्ख प्राणी,धर्म्म की सारन जानी०॥

॥ भभा ॥

भभा भटकत ही फिरो, गहो महा मिथ्यात
भेद न पायो ज्ञान को, तातैं आवत जात
तातैं आवत जात, बात सुने,भेदज्ञान नहिपायो

---

(१) खेटक = शिकार खेलना। (२) भव = जन्म।

क्रोध लोभ और मानजोमाया,तातेंनेह लगायो
परमार्थ की रीति न जानी, स्वार्थ देखभुलायो
सूरत जागोभेद ज्ञानजब,तब मिथ्यात मिटायो
अरे सुन मूर्ख प्राणी,धम्म की सारन जानी०॥

॥ ममा ॥

ममा मति ।तनकी सही, जिन मलकीनो दूर
मतवाले मल से भरे, तिन को नाहि शहूर।
तिन को नाहि शहूरदूरहे, कुमति कुमतविचारें
तिनके कुगुरु तिन्हें यह दावें,पकरें भवजल्दारें
पुण्य पाप का भेद न जानें,जीव अनाहक मारें
सूरत ते नर पड़ें कुसंगति,किसविधिदोपनिवारें
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्मकीसारन जानी०॥

॥ यया ॥

यया अजाण पणो बुरो, याते होय अकाज
जाण पणो कछू कीजिये,जाहि न आवे लाज

जाहिनआवेलाजबात सुण, कहोतेरायहांको है
तात मातबंधु सुतकामन, तू इनके सुख मोहै
आठों याम मग्न है इनमें, यहतुमकोनहि सोहै
सूरततजअज्ञानशिक्षागहजबतोहिशिवसुखहोहै
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारन जानी०॥

॥ ररा ॥

ररा रचो अनादिको, रुचि विषयन की प्रीति
रस नही चाखो आत्मिक, लखी न रसकी रीति
लखीनरसकीरीतिमीततैं, विषयनको सुखजानो
आत्मीक रस है सुख दाई, सो तैं नही पिछानो
जिनरसरीतिलखी आत्मकी, सोशिवपुरकोराणो
सूरततेभवि मुक्तगये हैं, जिन आत्महित आनो
अरे सुन, मूर्ख प्राणी, धर्म्म की सारनजानी०॥

---

(१) सुत = पुत्र।

॥ कथा ॥

ल्ला लिपटो ही रहे, लगो जगत् के भेक
लखो न आप स्वरूप को, लहोन शुद्ध विवेक
लहोन शुद्ध विवेक रीझतें, परआपा नहिं बूझा
वस्तु प्रकाशी नाहिं विरानी, तू कर्मन सों मूझा
जिनजिनआत्मसुकुलखो है, परसोंनाहिंअरूझा
सुरस भिन्नजोहैं विषयनसें, तिनकोआतमसूझा
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्मकी सारन जानी० ॥

॥ कथा ॥

वथा यह संगत बुरी, जामें होय कुभाव
यह सगत शैली[1] भली, जामें सहज सुभाव
जामेंसहजस्वभाव भाव हैं, सोशैलीमोहि प्यारी
तत्त्वद्रव्य[2] की चर्चा तिनके, तजे कुचर्चा न्यारी

(१) शैली — तरीका सोपत। (२) तत्त्व द्रव्य —
सातत्त्व नौ पदार्थ और छ' द्रव्यकी चर्चा

भरम भाव ते दूर रहत हैं, धर्म, ध्यानके लारी
सूरत यह बांछा मेरे मन, इन मित्रन सैं यारी
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥

॥ ससा ॥

ससा सज्जन वें भले, सुने सुगुरु की सीख
सदा रहें सुख ध्यान में, सही जैन की टाक
सहीजैनकीटीक जिन्होंके, सोसज्जनमोहेभावें
आगम और अध्यात्म वाणी, सुनेसुनावें गावें
कुकथाचारविकारजगत् की,तिनको नहींसुहावें
सूरत वें सज्जन मोहिप्यारे,जेशिव पंथ दिखावें
अरे सुन मूर्खं प्राणी, धर्म की सारन जानी० ॥

॥ षषा ॥

षषा खुटक निवार के। क्षमा भाव चित्तलाय
आश्रव सम्बर वन्ध ही। खिरे कर्म दुःख दाय
खिरेकर्मदुःखदायजायवहु, क्षमाभाव चित्तलावें

होय अभ्यास तास सज्जनको, अंतरज्ञानजगावें
सदा मग्न रहे अपने पद में, रीझ आप सुखपावे
सूरत ज्ञानवत गुरु भाषो, सो आत्म को ध्यावे
अरे मन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी०॥

॥ शशा ॥

शशा सोई शुद्ध है, सुगुरु सीख सुनलेत
सदा रहे सन्तोष में, सो साधु जग हेत
सो साधु जग हेत ताहि में, सो सतोषविचारे
जो वासें हैं से ,ससारी, तिनको नाहि निहारे
सकल्प विकल्प मनके जेते, इनदुस्मनको टारे
सूरत वह साधु है निश्चय, शिवपुर वेग सिधारे
अरे मन मूर्ख प्राणी, धर्म की सारन जानी०॥

॥ हहा ॥

हहा होय कहा रहो । हो परमें दुःख,पाय
होय आप वश ही रहे । होय परम सुख पाय

होयपरम सुखदायपायपद, अनुपम[1] अविनाशी
केवल ज्ञान दरसहो केवल, सिद्धपुरी सुखराशी[2]
आठों कर्म विषे है जिनके, आठोंगुण परगासी
सूरत सिद्ध महा सुख पावे, काल अनंते जासी
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार न जानी०॥

॥ लला ॥

लला लेके परम पद। लाखों गये निर्वाण
लोक शिखर ऊपर चढ़े। लियोसिद्ध शिवथान
लियोसिद्धशिवथानआनलख,सोईसिद्ध कहाये
दर्शनज्ञान चरितये तिनों, शिवपुर दें पहुंचाये
जो जो भाषे सोई दरसे, आप अटल ठहराये
सूरत ऐसे सिद्ध कहे गुरु, जे पुराण में गाये
अरे सुन मूर्ख प्राणी,धर्म की सार न जानी०॥

१। अनुपम = जिस के समान दूसरा नहीं। २। सुखराशि = अथाह सुख जिसकी थाह नहीं॥

॥ छप्पय ॥

क्षक्षा लक्ष्मी सो वरो । लक्षण गुण के भेव
लहे सिद्ध गुण अष्ट जो, धरे सुलक्षण टेव
धरेसुलक्षणटेव भेव लख, सिद्ध रूप को ध्यावे
अर्हंतसिद्धआचार्यउपाध्यायसाधन सीसनिवावे
जिनमत धर्म देव गुरु चारों, इनकी दृढ़तालावे
सूरत यह परतीत धरे मन, सो सम्यक् फल पावे
अरे सुन मूर्ख प्राणी, धर्म की सार, न जावी•

दोहा

सो सम्यकपद को लहे, करे गुरु वचन प्रतीत
देव धर्म गुरु ज्ञान को, परख गहे निज रीत
बारा खड़ीहितसों कही, गुनियन की नहीं रीस
दोहे सय चालीस हैं, छन्द कहे पैंतीस ॥

इति श्रीसूरत की बारहखड़ी संपूर्णा ।

१। भेव—परख। २। सिद्धरूप—परमात्मा।

छहढाला भाषा

पं० दौलतरामजी कृत।

(मंगलाचरण दर्शन स्तोत्र दोहा)

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंद रस लीन।
सो जिनेंद्र जयवंत नित, अरि रजरहसविहीन।१।

(पद्धरी छन्द)

जय वीतराग विज्ञान पूर। जय मोह तिमिर को हरण सूर॥ जय ज्ञान अनंतानंत धार। दृगसुख वीरजमंडित अपार २॥ जय परमशांति मुद्रा समेत। भविजन को निज अनुभूत हेत॥ भवि भागन वच जोगे वसाय। तुम धुनि ह्वै

---

(१) ज्ञेय = जाननेके योग्य संसारके पदार्थ। ज्ञायक = सत्ता रूप (वा) जानने वाला।

(२) पूर = प्रवाह। तिमिर = अन्धेरा। सर = सूर्य।

सुन विभ्रम नसाय ३॥ तुमगुण चिंतत निजपर विवेक। प्रगटे विघटे आपद अनेक॥ तुम जग भूषण दूषण विमुक्त। सब महिमा युक्त विकल्पमुक्त ४॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतन स्वरूप। परमात्म परम पावन अनूप॥ शुभ अशुभ विभाव अभाव कीन। स्वाभाविक परणतिमयअछीन ५
अष्टादश दोष विमुक्त धीर। स्व चतुष्टयमय राजत गंभीर॥ मुनि गणधरादि सेवत महत। नव केवळ ळब्धि रमा धरत ६॥ तुम शासन सेय अनेक जीव। शिवगये जाहिं जेहैं सदीव। भवसागर में दुख वारवार। तारन को औरन आप टार ७॥ यह लख निज दुख गद हरण काज। तुम ही निमित्त कारण इलाज॥ जाने

---

(१) विवेक—ज्ञान। (२) स्वाभाविक—कुदरती।

ताते मैं शरण आय। उचरो निज दुख जो चिर लहाय ८॥ मैं भ्रमो अपन पद विसर आप। अपनाये विधफल पुण्यपाप॥ निज को पर को करता पिछान। पर में अनिष्टता इष्ट ठान ९। आकुलित भयो अज्ञान धार। ज्यों मृग मृग तृष्णा जान वार॥ तन परणति में आपो चितार कव हूं न अनुभवो स्वपद सार ॥ १० ॥ तुम को जाने बिन जो कलेश। पायोसो तुम जानत जिनेश॥ पशु नारक नर सुर गति मझार। धर धर भव मरो अनंतवार॥ ११॥ अव काल लब्धि वल तै दयाल। तुम दर्शन पाय भयो खुशाल उर शांति भयो मिट सकल धन्द। चाखो स्वातम रस दुःखनिकन्द १२॥ तातै अव ऐसी

---

(१०) वार (वारि)=पानी।

करो नाथ। बिछुरे न कभी तुम चरण साथ। तुम गुण गण को नहीं छेव देव। जग तारण को तुम बिरद एव १३॥ आतमके अहित विषय कषाय। इन में मेरी परिणति न जाय॥ मैं रहूं आपमें आप लीन। सो करो होउं जो निजाधीन १४। मेरे न चाह कछु और ईश। रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश॥ मुझ कारज के कारण जु आप। शिवकरो हरो ममभोह ताप॥१५॥ शशि शांति करण तम हरण हेत। स्वयमेव तथा तुमकशल देत॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय। त्यों तुम अनुभव से भव नसाय॥ १६॥ त्रिभुवन तिहू काल मझार कोय। नहीं तुम बिन निज सुख दाय होय॥ मो उर यह निश्चय भयो आज।

---

(१३) छेव = अन्त। १६ पीयूष = अमृत।

भव जलध उतारन तुम जिहाज ॥ १७

दोहा ।

तुम गुण मणि गण गणपती गणत न पावै पार
दौल स्वल्पमति किम कहे, नमें त्रियोग सम्हार

प्रथमढाल ॥

(जिस में जीव का चारों गति में भ्रमण करने
और दुःख उठाने का वर्णन है)

॥ सोरठा छन्द ॥

तीन भवन में सार, बीतराग विज्ञानता ॥
शिव स्वरूप शिवकार, नमूँ त्रियोग संभार के १

॥ चौपाई छन्द ॥

जे त्रिभुवन में जीव अनंत। सुखचाहैं दुख तैं भयवन्त॥ तातें दुखहारी सुखकार । कहै सीख गुरु करुणाधार॥१॥ ताहिसनो भवि मन-

---

१७ जलध = समुद्र । १ करुणा = दया ।

थिरआन । जो चाहो अपनो कल्याण ॥ मोह महामद पियो अनाद। भूल आपको भ्र ममतवाद ॥२॥ तास भ्रमण की है बहुकथा। पैकछु कहूं कही मुनियथा ॥ काल अनंत निगोद मझार। बीत्यो एकेन्द्रीय तनधार ३॥ एक स्वांस में अठदस बार। जन्मो मरो मरो दुखभार ॥ निकस भूमि जल पावकभयो । पवन प्रत्येक वनस्पतियथो ॥ ४ दुलभलहिज्यों चिंतामणी। त्यों पर्याय लही त्रसतणी ॥ लट पिपील अलि-आदिशरीर। धरधर मरो सही बहुपीर ॥ ५ ॥ कबहूं पचेंद्रिय पशु भयो । मन बिन निपट अज्ञानी थयो ॥ सिंहादिक सैनीव्है कूर। निबल पशु हत खाय भूर ॥ ६ ॥ कबहूं आपभयो बल हीन। सबलन कर खायो अतिदीन ॥ छेदन भेदन भूख पियास। भार वहन हिम आतप

त्रास ॥७॥ वध बन्धन आदिक दुखघणे ।, कोट जीभकर जात न भणे ॥ अति संक्लेश भाव तें मरचो । घोर शुभ्रसागर में परचो॥८॥तहां भूमि परसत दुखइसो। वीछू सहस डसें तन तिसो। (१०००) तहां राधश्रोणित बाहनी। कृमिकुल कलित देहदाहनी ॥ ९ ॥ सेंभलतरु युतदल असिपत्र। असि ज्यों देह बिदारैं तत्र ॥ मेरुसमान लोह गलिजाय । ऐसी शीत उष्णता थाय ॥ १० ॥ तिल तिल करैं देह के खंड। असुर भिड़ावें दुष्ट प्रचंड ॥ सिंधु नीरतें प्यास न जाय। तो पण एक न बूंद लहाय ॥ ११ ॥ तीनलोक को नाज जो खाय। मिटै न भूख कणा एक न लहाय॥ये दुखवहु सागर लों सहै। करम योगतें नरभव लहै॥ १२॥जननी उदर बस्यो नव मास। अंग सकुच तें पायो त्रास ॥ निकसत जे दुख पाये

घोर। तिनको, कहत न आवैओर ॥१३॥ बालपने में ज्ञान न लह्यो। तरुण समय तरुणी रत रह्यो॥ अर्द्धमृतकसम बूढा पनो। कैसें रूपलखे आपनो ॥ १४ ॥ कभी अकाम निर्जरा करै। भवन त्रिक में सुरतन धरै॥ विषय चाह दावानल दह्यो। मरत विलाप करत दुखसह्यो ॥ जो विमानवाशी हू थाय। सम्यक् दर्शन बिन दुख पाय। तह्यां तें चय थावर तनधरै। योंपरिवरतन पूरे करै ॥ १५॥

अथ द्वितीय ढाल।

(इस में मिथ्यादर्शन ज्ञान चारित्र का वर्णन है)

पद्धरी छन्द ॥ १५ मात्रा

ऐसे मिथ्यादृग् ज्ञानचर्ण। वश भ्रमत भरत

---

१ दृग—देखना।

दुख जन्म मर्ण ॥ तासैं इनको तजिये सुजान।
सुन तिन संक्षेप कहूं बखान ॥ १ ॥ जीवादि
प्रयोजन भूततत्त्व। शरधैतिन मांहि विपर्ययत्व।
चेतन को है उपयोग रूप। बिन मूरति चिन्मू-
रति अनूप॥२॥ पुद्गल नभधर्म अधर्म काल।
इनतै न्यारी है जीव चाल॥ ताकों न जान
विपरीत मान। करकरै देहमें निज पिछान॥३
मैंसुखी दुखी मैं रंकराव। मेरा धन गृह गोधन
प्रभाव॥ मेरा सुत तिय मैं सबल दीन। बेरूप
सुभग मूरख प्रवीन॥ ४ ॥ तन उपजत अपनी
उपज जान। तननशत आप को नाशमान।
रागादि प्रगटये दुख दैन। तिनही को सेवत

---

३ नभ=आकाश। ४ रंक—कंगाल, भिखारी।
४ प्रवीण=पण्डित।

गिन्यो चैन ॥ ५ ॥ शुभ अशुभ बन्ध के फल मझार। रति अरति करी निजपद विसार ॥ आतम हित हेतु विराग ज्ञान। ते लखे आपको कष्टदान ॥६॥ रोकी न चाह निज शक्तिखोय। शिवरूप निराकुलता न जोय ॥ ,याही प्रतीत युत कछुक ज्ञान। सो दुखदाई अज्ञान जान ॥ ७ ॥ इन युत विषयन में जो प्रवृत्त। ताको जानो मिथ्या चरित्त॥ यों मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह। अयजेग्रहित सुनियेजुनेह ॥८॥ जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव। पोखें चिरदर्शन मोहएव ॥ अन्तर रागादिक धरें जेह। बाहर धन अंबर सें स्नेह ॥ ९ ॥ धारें कुलिंग लहि महत भाव। ते कुगुरु जन्मजल उपल नाव ॥ जो राग द्वेष

---

६ रति—प्रीति। ७ चाह—तृष्णा। ८ अम्बर—वस्त्र। ↲
९ उपल नाव—पत्थर की बेड़ी।

मलकर मलीन । वनितागदादि युतचिन्ह चीन ॥१०॥ ते हैं कुदेव तिनकी जोसेव । शठ करत नतिन भव भ्रमण छेव ॥ रागादि भाव हिंसा समेत । दरवित त्रस थावर मरण खेत११॥ जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म । तिन शरधै जीव लहै अशर्म ॥ याको गृहीत मिथ्यात जान । अब सुनगृहीत जोहै अजान ।१२। एकांत बाददूषित समस्त । विषयादिक पोषक अप्रशस्त ॥ कपिलादि रचित श्रुतिको अभ्यास । सो है कुबोध बहु देन त्रास ॥१३॥ जो ख्याति लाभ पूजादि चाह । धर करत विविध विध देह दाह ॥ आतम अनातम के ज्ञान हीन । जे जे करनी तन करन छीन ॥ १४ ॥ ते सब मिथ्या चारित्र

---

१० वनिता = स्त्री ।

त्याग । अब आतम के हित पथ लागि ॥ जग जाल भ्रमणको देय त्यागि । अब दौलत निज आतम सुपागि ॥ १५ ॥

अथ तृतीय ढाल ।

(जिसमें निश्चय व्यवहाररूप सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र का कथन है) ॥

(चाल जोगी रासा नरेंद्र छंद २८ मात्रा)

आतमको हित है सुख सो सुख, आकुलता विन कहिये । आकुलता शिव माहिं न तातें शिव मग लाग्यो चहिये ॥ सम्यक दर्शन ज्ञान चरण शिव, मगसो दुविधि विचारो । जो सत्यार्थ रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥१

परद्रव्यन तें भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त

१ शिवमग—मुक्तिका रास्ता।

भला है ॥ आप रूप को जान पनों सो, सम्यक् ज्ञान कला है। आप रूप में लीन रहै थिर सम्यक् चारित सोई॥ अव व्यवहार मोक्ष मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥२॥ जीव अजीव तत्व अरु आश्रव वन्ध रु सम्वर जानो। निर्जर मोक्ष कहै जिन तिनको,ज्यों को त्यों शरधानो। है सोई समकित व्यवहारो, अव इन रूप बखानो ॥ तिनको सुन समान विशेषै, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥३॥ वहिरातम अन्तर आतम, परमातम जीव त्रिधा है। देह जीव कों एक गिनै, वहिरातम तत्व मुधा है ॥ उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी द्विविध संग बिन शुध उपयोगी, मुनि उत्तम

४ त्रिधा = बहिरात्मा, अन्तरात्मा, परमात्मा, ऐसे तीन प्रकार का जीव है। जघन = निकृष्ट।

निज ध्यानी ॥ ४ ॥ मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रति आगारी। जघन कहे अविरत सम दृष्टी, तीनों शिव मगचारी॥ सकल निकल परमातम द्वैविध, तिनमें घात निवारी। श्री अरहन्त सकल परमातम, लोका लोक निहारी ॥ ५ ॥ ज्ञान शरीरी त्रिविधि कर्ममल, वर्जित सिद्ध महन्ता। ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता ॥ बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर आतम हूजे। परमातम को ध्याय निरन्तर, ज्यों नित आनन्द पूजे ॥ ६ ॥ चेतनता बिन सो अजीव है, पञ्च भेद ताके हैं। पुद्गल पचवरण रसपन गंध दो, फरस वसू जाके हैं ॥ जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्म

---

१ घात—हिंसा। ५ पमक—मुख। हेय—त्याग के योग्य।

द्रव्य अनरूपी। तिष्ठतहोय अधर्म सहाई, जिन विन मूर्ति निरूपी ॥७॥ सकल द्रव्य को वास जासमें, सो आकाश पिछानो। नियत वर्तना निशिदिन सो, व्यौहार काल परिमानो॥ यों अजीव अव आश्रव सुनिये, मनवच काय त्रियोगा। मिथ्या अव्रति अरु कषाय परमाद सहित उपयोगा ॥ ८ ॥ येही आतसको दुख कारण, तातें इनकों तजिये। जीव प्रदेश वंधै विधिसों सो बन्धन कवहुन सजियै॥ शम दम तै जो कर्म न आवै, सो संवर आदरियै। तप वल विधि तै करत निर्जरा, ताहि सदा आचरियै ॥९॥ सकल कर्म तै रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी। यह विधि जो शरधा तत्वन की, सो

८। शम = शान्ति। दम = इन्द्रियों को विषयोंसे रोकना ॥

समकित व्यवहारी ॥ देव जिनेंद्र गुरु परिग्रह बिन, धर्म दया युतसारो ॥ यह मान समकित को कारण अष्ट अंग युत धारो ॥१०॥ वसु मद टार निवार त्रिशठता, षट अनायतन त्यागो। शंकादिक वसु दोष बिना, संवेगादिक चित पागो। अष्टअंग अरु दोष पचीसों, अब संक्षेपै कहिये। बिन जाने तैंदोष गुणनको,कैसे तजिये गहिये॥११ जिन वच में शंका न धार वृष, भव सुखवांछाभानै॥मुनितन मलिनदेख न घिनावे, तत्वकुतत्व पिछानै ॥ निज गुण अरु पर औगुण ढांके,वानिज धर्म बढावे।कामादिक कर वृष तैं डिगते, निज परकों सो दिढावे॥ १२॥ धर्मी सों गऊ बच्छ प्रीत सम,कर जिन धर्म दिपावें॥ इन गुण तें विपरीत दोष वसु, तिनको सतत

११॥ विपरीत—उलटा। वसु—आठ।

खिपावैं॥ पिता भूप वा मातुल नृप जो। होय न तो मद ठाने॥ मद न रूप का मद न ज्ञानको धन बलको मदभाने॥ १३॥ तप को मद न मद न प्रभुताको। करै न सो निजजाने। मद धारै तो यही दोष वसु सम्यक्त कूं मल ठानैं॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म सेवक की। नहिं प्रशंस उचरै है। जिनमुनजिनिश्रुति विन कुगुरादिक। तिन्हें न नमन करै है॥ १४॥ दोष रहित गुण सहित सुधीजे। सम्यक् दर्श सजेहैं। चारित मोह वश लेश न संयम। पै सुरनाथ जजैं हैं॥ गेही परिग्रह में न रचैं ज्यों। जल में भिन्न कमल है॥ नगर नार को प्यार यथा कादे मै हेम अमल है॥ १५॥ प्रथम नरक

१५। सुधी=पण्डित। गेही=गृहस्थी।

।बिन पटभं ज्योतिष। थान भवन सयनारी।
थावर विकलत्रय पशु मे नहिं । उपजत
सम्यक्‌धारी ॥ तीन लोक तिहूकाल माहिं
नहिं दर्शन सो सुखकारी ॥ सकल
धम को मूल यही इस । बिन करणी दुखकारी
॥१६॥ मोक्ष महलकी परथमा सीढी । या,बिन
ज्ञान चरित्रा । सम्यकता न लहै सो दर्शन ॥
धारो भव्य पवित्रा ॥ दौल समझ सुन चेत
स्याने । काल वृथा मत खोवै । यह नर भव
फिर मिलन कठिन है ।जो सम्यक्‌ नहिंहोवै १७

— —

१६ हेम—सोना । १७ प्रथमा—पहिली ।

अथ चतुर्थ ढाल।

(जिस में व्यवहार सम्यक् ज्ञान चारित्र का वर्णन है)

॥ दोहा छन्द ॥

सम्यक् शरधा धार पुन। सेवहु सम्यक् ज्ञान ॥
स्वपर अर्थ बहु धर्म युत, जो प्रगटावनभान ॥१॥

रोला छन्द ॥ २४ मात्रा

सम्यक् साथै ज्ञान। होय पै भिन्न अराधो
लक्षण शरधा जान। दुहू मै भेद अबाधो ॥
सम्यक् कारण जान। ज्ञान कार्य्य है सोई ॥
युग पति होते भी प्रकाश। दीपक तैं होई ॥१॥
तासु भेद दो हैं। परोक्ष प्रत्यक्ष तिन मांही।
मतिश्रुति दोय परोक्ष। अक्ष मन तैं उपजाहीं॥

---

१ स्व = अपने। पर = दूसरे। २ परोक्ष = जो आंख से परे है। मति = ज्ञान जो बुद्धि का ज्ञान है- अक्ष = इन्द्रियें।

द्रव्य छेत्र परिमाण। लिये जानें निय स्वच्छा२
सकल द्रव्य के गुण अनन्त। पर्य्याय अनंता।
जानें एकै काल। प्रगट केवलि भगवन्ता॥
ज्ञान समान न आन। जगत् में सुख को
कारण। यह परमामृत जन्म। जरामृत रोग
निवारण।३।(कोटि)क्रोड जन्म तप तपें। ज्ञान
बिन कर्म झरें जे। ज्ञानी के छिन मेंत्रि। गुप्ति
तें सहज टरें जे॥ मुनि व्रत धार अनत। बार
ग्रीवक उपजायो। पै निज आतम ज्ञान। बिना
सुख लेश न पायो॥ ४॥ तातें जिनवर कथित
तत्व अभ्यास करीजे। सशय विभ्रम मोह।
त्याग आपो लख लीजे॥ यह मानुष पर्याय।
अवधि ज्ञान मन पर्य्य। दोहैं देश प्रत्यच्छा।

१। जरा—बुढ़ापा। मृत—मरण।

सुकुल सुनियो जिनबानी। यह विधि गए न मिलै। सुमणि ज्यों उदधि समानी ॥ ५ ॥ धन समाज गज बाज। राज तो काज न आवै। ज्ञान आप को रूप। भये फिर अचल रहावै ॥ तास ज्ञान को कारण स्वपर विवेक बखानो। कोट उपाय बनाय। भव्यता को उर आनो ॥ ६ ॥ जे पूरब शिव गए। जांय अब आगे जै हैं सो सब महिमा ज्ञान। तणी मुनिनाथ कहे हैं ॥ विषय चाह दव दाह। जगत् जन अरण दझावै तास उपाय न आन। ज्ञान घन घान बुझावै। ॥ ७ ॥ पुण्य पाप फल मांहि। हरष बिलखो मत भाई। यह पुद्गल पर्याय। उपज बिनशै फिर थाई ॥ लाख बात की बात। यही

---

५ उदधि=सागर ६ गज=हाथी। बाज=घोड़ा ॥

निश्चय उरलायो। तोर सकल जग धंध। फंद निज आतम ध्यायो ॥८॥ सम्यक ज्ञानी होय। बहुरि दृढ चारित लीजे ॥ एक देश अरु सकल। देश तस भेद कहीजे॥ त्रस हिंसा को त्याग। वृथा थावर न सघारे। पर वध कार कठोर। निंन्द नहीं बैन उचारे॥९॥ जल मृतका बिन और। नहीं कुछ गहे अदत्ता निज बनिता बिन सकलनारि सों रहे विरत्ता। अपनी शक्ति विचार। परिग्रह थोरों राखे। दश दिशि गमन प्रमाण। ठाणत सुसीम न नाखे ॥१०॥ ताहू में फिर ग्राम। गली ग्रह बाग बजारा। गमनागमन प्रमाण। ठान और सकल निवारा॥ काहू का धन हानि।

---

१ मृतका–मिट्टी। बनिता—स्त्री॥

किसी कि जय हार न चिंतै। देय न सो उपदेश।
होय अघ-वणज कृषी तैं॥११॥ कर प्रमाद-जल
भूमि। वृक्ष पावक न विराधै। असि धनु हल
हिंसोपकरण नहीं दे यशलाभै॥ राग द्वेष
करतार। कथा कबहूं न सुनीजै। और
हू अनरथ दंड। हेतु अघ तिन्है न कीजै॥१२॥
धर उर समता भाव। सदा सामायिक करिये।
पर्व चतुष्टय मांहि। पाप तज प्रोषध धरिये॥
भोग और उपभोग। नियम कर ममत निवारै।
मुनि को भोजन देय। फेर निज करिये अहारे
बारह व्रत के अतीचार। पन पन न लगावै।
मरण समय संन्यास। धार तसु दोष नसावै॥
यों श्रावक व्रतपाल। स्वर्ग सोलम उपजावै।
तिहैं तैं चयनर जन्म। पाय मुनि हो शिव पावै॥

---

(११) अघ—पाप। कृषि—खेती।

अथ पंचम ढाल।

(इस में बारह भावना का वर्णन है—चाल मनहरणछन्द)

मुनि सकल व्रती बड़भागी। भव भोगन तें वैरागी। वैराग्य उपाय न माई। चिंतें अनुप्रेक्षा भाई ॥१॥ तिन चिंतत सम सुख जागे। जिम ज्वलन पवन के लागे। यौवन धन गोधन नारी। हयगय ना जन आज्ञाकारी॥२॥इन्द्रिय भोग छिनथाई। सुरधनु चपला चपलाई। सुर असुर खगाधिप जेते। मृग ज्यों हरिकाल दलेते ॥३॥ मणि मंत्र यंत्र बहु होई। मरते न बचावै कोइ। चहुंगति दुःख जीव भरें हैं। परिवर्तन पंचकरें हैं ॥४॥ सब विधि संसार

१। ज्वलन — आग। यौवन — जुवानी। २। सुरधनु — जो बादलोंमें इन्द्र की कमान पड़े है। चपलाई — बिजुली। का चमत्कारा ॥

असारा । तामें सुख नाहिं लगारा ॥ शुभ
अशुभ करमफल जेते। भोगैं जिय एकही तेते॥५
सुत दारा होय न सीरी । सब स्वारथके हैं भीरी
जल पय ज्यों जियतन मेला। पैभिन्न भिन्न
नहिं भेला ॥६॥ यतो प्रगट जुदे धन धामा ।
क्यों ह्वैइक मिल सुतरामा ॥ पल रुधिर राध
मल थैली । कीकशवसाद तैं मैली ॥७॥ नवद्वार
बहैं घिनकारी । इस देह करै किमयारी ॥ जो
योगन की चलताई । तातैं ह्वै आश्रव भाई
॥८॥ आश्रव दुखकार घनेरे । बुधवन्तहि तिनहु
नवेरे ॥ जिन पुण्य पाप नहिं कीना । आतम
अनुभव चितदीना ॥९॥ तिनही विधि आवत
रोके । संवर लहि सुख अवलोके ॥ निज काल
पाय विधि झरनो । तासै निजकाज न सरनो

---

६ दारा—स्त्री । पय—दूध ।

॥१०॥ तप कर जो कर्म खपावै। सोई शिव सुख दरसावै॥ किनहूं न करो न धरै को। षद् द्रव्य मई न हरै को॥११॥ सो लोक मांहि विन समता। दुःख सहै जीव नित भ्रमता॥ अंतिम ग्रीवक लौंकी हद। पायो अनन्त बरियां पद॥१२॥ पर सम्यक ज्ञान नलाधो। दुर्लभ निज में मुनि साधो॥ जे भाव मोह सौं न्यारे दृग ज्ञान व्रतादिक सारे॥१३॥ ते धर्म जवै जिय धारै। तवही सुख अचल निहारै॥ सो धर्म मुनिनकर धरिये। तिनकी करतूति उचरिये॥१४॥ ताका सुनिये भवप्रानी। अपनी अनुभूति पिछानी॥ जब हीयो आतम जानें। तव ही निज शिव सुखपानें॥१५॥

---

११ षट—छै। १२-अन्तिम—आखीरका।

षष्टम ढाल।

(इस में मुनियों की क्रियायों का कथन है)

॥ हरगीत छन्द ॥

षट्काय जीव न हनन तैं सब विधिदरब हिंसाटरी ॥ रागादि भाव निवार तैं हिंसा न भावत अवतरी ॥ जिनकै न लेश मृषा न जल तृण हू बिना दीयो गहैं॥ अठदश सहस विधि शील धर चितब्रह्ममें नित रम रहैं॥१॥ अंतर चतुर्दश भेद बाहिर। संगदश धातै टलैं। परमाद तजचउकर महीलख। समिति ईर्यातैं चलैं। जग सुहितकर सब अहित हरश्रुति सुखद सब संशय हरैं ॥ भ्रम रोगहर जिनका वचन मुख चंद्र तैं अमरित झरैं ॥२॥ छयालीस

१-हनन = हिंसा। मृषा = झूठ।

दोष विनाश कुल श्रावकतणे घर अशनको ॥ लें तप बढावन हेत नहिं तन। पोषते तज रसन कों ॥ शुचि ज्ञानसयम उपकरण लखि के गहैं लखि के धरें॥ निर्जन्तु थान विलोक तन मल। मूत्र श्लेषम परिहरें॥३॥ सम्यक् प्रकारनिरोध मन। वचकाय आतमध्यावते ॥ तिन सुथिरमुद्रा देख मृगगण उपल खाज खुजावते। रस रूप गंध तथा फरस अरु। शब्द अशुभ सुहावने॥ तिनमें न राग विरोध पंच इन्द्रिय जयनपदपावने ॥४॥ समता संभारें थुति उचारें। वंदना जिनदेव कों। नितकरें श्रुति रतिकरें प्रतिक्रम। तजें तन अहमेव कों। जिन के न न्होन न दंत धोवन लेश अंबर आवरन।

४। उपल = पत्थर। ५. अहमेव = बारंबार।

भू माहि पिछली रैन मै कुछ शैनएकाशन करन ॥५॥ इकबार दिनमें लैं अहार। खड़े अलप निज पान सें ॥ कच लोंच करत नडरत परिसह सो लगे निज ध्यान में ॥ अरिमित्र महल मसान कंचन। कांच निन्द न थुतिकरण अर्घावतारण असिप्रहारण। में सदा समता धरण॥६॥ तपतपें द्वादश धरैं वृषदश रत्नत्रय सेवैं सदा॥ मुनि साथ मै वा एक विचरैं चहैं नहीं भवसुख कदा॥ यो हैं सकल संयम चरित सुनिये स्वरूपाचर्ण अब॥ जिसहोत प्रगटै आपनी निध मिटै परकी प्रवृति सब॥७॥ जिन परमपैनी सुबुधि छैनी। डार अंतर भेदिया वरणादि अरु रागादि तैं, निज भाव को न्यारा किया॥ निज मांहि निज के हेत निजकर,

---

६ पान=हाथ।

आपको आपै गह्यो ॥ गुणगुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय, मझार कुछ भेद नरह्यो ॥८॥ जहां ध्यान ध्याता ध्येय न विकल्प वच भेदन जहां ॥ चिद्भाव कर्म चिदेश करता। चेतना किरया तहां ॥ तीनों अभिन्न अखिन्न शुध। उपयोग की निश्चल दशा ॥ प्रगटी जहां दृगज्ञान व्रत ये तीन धा एकैलशा ॥ ९ ॥ परमाण नय निक्षेप को न। उद्योत अनुभव में दिखै ॥ दृग ज्ञान सुख बल मय सदा नहीं आनभाव जुमोखपै ॥ मै साध्य साधक मे अबाधक। कर्म अरु तसु फलन सैं॥ चितपिंड चंड अखंड सुगुण करंडच्युत पुनि कलनि तें ॥१०॥ यों चिन्त्य निजमे थिर भये तिन। अकथ जो आनंदलह्यो

ध्याता — ध्यानने वाला। ध्याता — ध्यान करने वाला॥

सो इन्द्र नागनरेन्द्र वा अहमेंद्र के नाहीं कह्यो। तब ही शुकल ध्यानाग्नि करचउ। घात विधि कानन दह्यो॥ सब लख्यो केवल ज्ञान करि भवि लोक कों शिव मग कह्यो॥११॥पुनि घाति शेष अघाति विधि। छिनमांहि अष्टम भू वसे॥ वसु कर्म विनशे सुगुण वसु। सम्यक्त आदिक, सबलसे॥ संसार खार अपार पारा। वार तिर तीरैंगये। अविकार अकल अरूप शुध चिद्रू। रूप अविनाशी भये॥ १२ ॥ निज मांहि लोक अलोक गुण पर्याय प्रतिबिंबित थये॥रहिहैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव पर नये॥ धनि धन्य हैं जे जीव नर। भव पाय यह कारज किया। तिनही अनादी भ्रमण। पंच

---

१२ पारावार=समुद्र।

प्रकार तज वर सुख लिया ॥ १३ ॥ मुख्योप चार दुभेद यों वड़ भाग रत्नत्रय धरें ॥ अर धरेंगे ते शिव लहें तिन । सुयश जल जगमल हरें ॥ इम जान आलश हानि साहस ठान । ह्रान यहशिप आदरो ॥ जबलों न रोग जरा गहे तब । लौं भगति निज हित करो ॥१४॥ ये राग आग दहें सदा तातें शमामृत पीजिये ॥ चिर भजे विषय,कषाय अब तो । त्याग निजपद लीजिये ॥ कहा रच्यो पर पद में न तेरो । पद यहै क्यों दुख सहे ॥ अब दौल होउ सुखी स्वपदरचि दाव मत चूके यहै ॥१५॥

दोहा छन्द ॥

इकनववसु इक वर्ष की । तीज शुक्ल वैशाख ।

१६ शमामृत — शान्तिरूप अमृत ।

कह्योतत्त्व उपदेश यह। लखि बुधजन की साख
लघुधी तथा प्रमाद तैं। शब्द अर्थ की भूल॥
सुधी सुधार पढ़ो सदा। ज्यों पावो भवकूल॥१६

इति
श्री दौलतराम कृत
छहढाला भाषा
सम्पूर्णम्

---

१६ लघधी = अल्पबुद्धि। भवकूल = संसारपार।

श्री वीतरागाय नमः ।

श्रीतत्त्वार्थसूत्रम्

त्रैकाल्यं द्रव्यषटकं नवपदसहितं जीवषट्कायलेश्याः ॥ पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रतसमितिगतिज्ञान चारित्रभेदाः ॥ इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवनमहितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ॥ प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान् यः स वै शुद्धदृष्टिः ॥१॥ सिद्धे जयप्पसिद्धे चउविह आराहणा फलपत्ते ॥ वन्दित्ता अरिहन्ते वोच्छ आराहणाकमसो ।२। उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं सहाण च णित्थरणं॥ दंसणणाणं चरित तवाणमाहाराहणा भणिया ।३॥

अथ प्रथमोऽध्यायः।

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्म भूभृताम्॥
ज्ञातारं विश्वतत्वानां वन्देतद्गुणलब्धये ॥१॥

सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः १ तत्वार्थ श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम्॥ २॥ तन्निसर्गादधिगमाद्वा ॥३॥ जीवाजीवास्रवबन्धसंवरनिर्जरामोक्षास्तत्वम्॥ ४॥ नामस्थापना द्रव्यभावतस्तन्न्यासः॥ ५॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६॥ निर्देशस्वामित्वसाधनाधिकरण स्थितिविधानतः॥ ७॥ सत्सङ्ख्याक्षेत्रस्पर्शनकालान्तरभावाल्पबहुत्वैश्च॥ ८ ॥ मतिश्रुतावधिमनः पर्ययकेवलानि ज्ञानम् ॥ ९॥ तत्प्रमाणे॥ १०॥ आद्ये परोक्षम्॥ ११ ॥ प्रत्यक्षमन्यत् ॥१२॥ मतिः स्मृतिः सञ्ज्ञा चिन्ता

भिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिन्द्रिया निन्द्रियनिमित्तम् ॥१४॥ अवग्रहेहावायधारणा ॥१५॥ बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अर्थस्य ॥ १७ ॥ व्यञ्जन स्यावग्रह ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् १९ श्रुतंमतिपूर्वंद्व्यनेकद्वादशभेदम् ॥ २० ॥ भव प्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥२१॥ क्षयोपशम निमित्त षडविकल्प शेषाणाम् ॥ २२॥ ऋजु विपुलमतिमनः पर्ययः ॥२३॥ विशुद्ध्यप्रतिः पाताभ्यां तद्विशेष ॥२४॥ विशुद्धिक्षेत्रस्वामि विषयेभ्योऽवधिमन पर्य्ययो ॥ २५ ॥ मतिश्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ रूपिष्ववधे ॥ २७ ॥ तदनन्तभागे मन पर्य यस्य ॥ २८ ॥ सर्वद्रव्यपर्यायेषु केवलस्य ॥२९॥ एकादीनिभाज्यानियुगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥

३० ॥ मतिश्रुतावधयोविपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत्॥३२ नैगमसङ्ग्रहव्यवहारर्जुसूत्रशब्द समभिरूढैवम्भूता नयाः ॥ ३३ ॥

श्लोक०—ज्ञानदर्शनयोस्तत्वं नयानांचैवलक्षणम् ॥ ज्ञानस्य च प्रमाणत्वमध्यायेऽस्मिन्निरूपितम् ॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः ।

औपशमिकक्षायिकौभावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्वमौदयिकपारिणामिकौच ॥ १ ॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिभेदा यथाक्रमम् ॥२॥ सम्यक्त्वचारित्रे॥३॥ ज्ञानदर्शनदानलाभभोगोप भोगवीर्य्याणिच ॥४॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धय-

श्चतुस्त्रित्रिपञ्च भेदा ॥ ५॥ सम्यक्त्वचारित्र संयमासंयमाश्च ॥ ६ ॥ गतिकषाय लिङ्गमिथ्यादर्शनाज्ञानासंयता सिद्धलेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्यकैकैकैकषड्भेदा ॥ ७ ॥ जीवभव्याभव्यत्वानिच ॥ ८॥ उपयोगो लक्षणम् ॥ ९॥ सद्विविधोऽष्टचतुर्भेद ॥ १० ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥११ ॥ समनस्काऽमनस्काः ॥ १२॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १३ ॥ पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावरा ॥ १४ ॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ॥ १५ ॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १६ ॥ द्विविधानि ॥ १७॥ निर्वृत्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ॥ १८॥ लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ॥ १९॥ स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ २०॥ स्पर्श रसगन्धवर्ण शब्दास्तदर्थाः ॥ २१॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २२ ॥ वनस्पत्यन्तानामेकम् ॥ २३ ॥

कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकवृद्धानि ॥ २४ ॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २५ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः ॥ २६ ॥ अनुश्रेणिगतिः ॥ २७ ॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२८ ॥विग्रहवती च संसारिण· प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २९ ॥ एकसमयऽविग्रहा ॥ ३० ॥ एकं द्वौ त्रीन्वाऽनाहारकः ॥ ३१ ॥ सम्मूर्छनगर्भोपपादाज्जन्म ॥ ३ ॥ सचितशीत संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः । ३३ ॥ जरायुजाण्डजपोतानाङ्गर्भः ॥ ३४ ॥ देवनारकाणामुपपादः॥ ३५ ॥ शेषाणांसम्मूर्छनम् ॥ ३६ ॥ औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि॥३७ ॥ परंपरंसूक्ष्मम् ॥ ३८ ॥ प्रदेशतो ऽसंख्येयगुणं प्राक्तैजसात् । ३९ ॥ अनन्तगुणे परे ॥ ४० ॥ अप्रतीघाते ॥ ४१ ॥ अनादिसम्बन्धे च ॥ ४२ ॥ सर्वस्य ।४३।

तवादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ४४ ॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥ ४५ ॥ गर्भसम्मूर्छ नजमाद्यम् ॥ ४६ ॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ४७ ॥ लब्धिप्रत्ययं च ॥४८॥ तैजसमपि॥ ४९ शुभविशुद्धमव्याघाति चाहारकं, प्रमत्तसंयतस्यैव ॥ ५० ॥ नारकसम्मूर्छिनो नपुंसकानि ॥ ५१ ॥ न देवा ॥ ५२ ॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५३॥ औपपादिकचरमोत्तमदेहा सङ्ख्येयवर्षायुषो ऽनपवर्त्यायुषः ॥

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ।

अथ तृतीयोऽध्यायः ॥

रत्न शर्करा वालुकापंक धूमतमो महातमः प्रभाभूमयो घनाम्बुवाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥१॥ तासुत्रिंशत्पञ्चविंशति-पञ्चदशदश

त्रिपञ्चोनैकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथा-
क्रमम् ॥ २ ॥ नारकानित्याशुभतरलेश्या परि-
णामदेहवेदना विक्रियाः॥ ३ ॥ परस्परोदीरित-
दुःखाः ॥ ४ ॥ संक्लिष्टासुरोदीरितदुःखाश्च
प्राक्चतुर्थ्याः ॥ ५ ॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदश
द्वाविंशतित्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्वानां परा
स्थितिः ॥ ६ ॥ जम्बूद्वीपलवणोदादयः शुभनामा
नो द्वीपसमुद्राः ॥ ७ ॥ द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्वपूर्व
परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ॥ ८ ॥ तन्मध्ये मेरु
नाभिर्वृत्तो योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बू-
द्वीपः ॥ ९ ॥ भरतहैमवतहरिविदेहरम्यकहै
रण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥ तद्विभा-
जिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषध-
नीलरुक्मिशिखरिणो वर्षधरपर्वताः ॥ ११ ॥
हेमार्जुनतपनीयवैडूर्यरजतहेममयाः ॥ १२ ॥

मणिविचित्रपार्श्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥ १३ ॥ पद्ममहापद्मतिगिञ्छकेशरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका ह्रदा स्तेषामुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्धविष्कम्भो ह्रदः ॥१५॥ दशयोजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्येयोजन पुष्करम् १७ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणा ह्रदाःपुष्कराणि च॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्य श्रीह्रीधृतिकीर्ति बुद्धि लक्ष्म्यःपल्योपमस्थितयःससामानिकपरिषत्काः १९।गङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्या हरिद्धरिकान्ता सीतासीतोदा नारी नरकान्ता सुवर्णरूप्यकूला रक्तारक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥ २० ॥ द्वयो द्वयो पूर्वा पूर्वगाः ॥ २१ ॥ शेषास्त्वपरगाः ॥ २२ ॥ चतुर्दशनदीसहस्र परिवृता गङ्गा सिन्ध्वादयोनद्यः ॥२३॥ भरतःषड्विंशतिपञ्च योजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागायो

जनस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्ष-धर वर्षा विदेहान्ताः ॥ २५ ॥ उत्तरा दक्षिण-तुल्याः ॥ २६ ॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट् समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥ ताभ्यामपराभूमयोऽवस्थिताः ॥२८ ॥ एकद्वि-त्रिपल्योपमस्थितयो हैमवतकहारिवर्षकदैवक-रुवकाः ॥ २९ ॥ तथोत्तराः ॥ ३० ॥ विदेहेषु सङ्ख्येयकालाः ॥ ३१ ॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवतिशतभागाः ॥ ३२॥ द्विर्धात-कीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥ ३४ ॥ प्राग्मानु-षोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्य्या म्लेच्छाश्च ।३६। भरतैरावतविदेहाःकर्मभूमयोऽन्यत्रदेव कुरूत्तर-कुरुभ्यः ॥ ३७ ॥ नृस्थितीपरावरे त्रिपल्योप-मान्तमुहूर्ते ॥ ३८ ॥ तिर्यग्योनिजानां च ॥३९॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः

देवाश्चतुर्णिकाया ॥ १ ॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥ २ ॥ दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोप पन्नपर्य्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशत्पारिषदात्मरक्ष लोकपाला नीक प्रकीर्णकाभियोग्यकिल्विषिकाश्चैकश ॥ ४ ॥ त्रायस्त्रिंशल्लोकपालवर्ज्या व्यन्तरज्योतिष्का ॥५ पूर्वयोर्द्वीन्द्रा ॥ ६ ॥ कायप्रवीचारा आऐशानात् ॥ ७ ॥ शेषा स्पर्शरूपशब्दमन प्रवीचराः ॥८॥ परे ऽप्रवीचारा ॥ ९ ॥ भवनवासिनो ऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितोदधिद्वीपदिक्कुमारा ॥१०॥ व्यन्तरा किन्नर किम्पुरुषमहोरगगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचा ॥ ११ ॥ ज्योतिष्का सूर्याचन्द्रमसौ ग्रह

नक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥ १२॥ मेरुप्रदक्षिणा नित्यगतयोनृलोके ॥ १३ ॥ तत्कृतः काल-विभागः ॥ १४ ॥ बहिरवस्थिताः ॥ १५ ॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाःकल्पातीताश्च ॥ १७ ॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मेशानसनत्कु-मारमाहेन्द्रब्रह्मब्रह्मोत्तरलांतवकापिष्ट शुक्रम-हाशुक्रसतारसहस्रारेष्वानत प्राणतयोरारणा-च्युतयोर्नवसुग्रैवेयकेषु विजय वैजयन्त जयन्ता पराजितेषु सर्वार्थ सिद्धौ च ॥१९॥ स्थितिप्र-भावसुखद्युतिलेश्या विशुद्धीन्द्रियावधिविषय-तोऽधिकाः ॥२०॥ गतिशरीरपरिग्रहाभिमानतो हीनाः ॥ २१ ॥ पीतपद्मशुक्ललेश्याद्वित्रिशेषेषु ॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥ २३ ॥ ब्रह्म लोकालया लोकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वतादि त्यवन्ह्यरुणगर्दतोय तुषिताव्याबाधारिष्टाश्च

२५ ॥ विजयादिषु द्विचरमाः ॥ २६ ॥ औपपादिकमनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥ २७ ॥ स्थितिरसुरनागसुपर्णद्वीपशेषाणांसागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिता ॥ २८ ॥ सौधर्मेशानयो सागरोपमेऽधिके ॥ २९ ॥ सनत्कुमारमाहेन्द्रयोः सप्त ॥ ३० ॥ त्रिसप्तनवैकादशत्रयोदशपञ्चदशभिरधिकानि तु ॥३१॥ आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेननवसुग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥ ३२ ॥ अपरापल्योपममधिकम् ॥ ३३ ॥ परतः परतः पूर्वापूर्वानन्तरा ३४ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥ ३५ ॥ दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥ व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥ परापल्योपममधिकम् ३९ ॥ ज्योतिष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टभागोऽपरा ॥ ४१ ॥ लौकान्तिकानामष्टौ सागरोप

माणि सर्वेषाम् ॥ ४२ ॥

इतितत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्याय:

अथ पञ्चमोऽध्याय:

अजीवकायाधर्माधर्माकाशपुद्गला ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥ २ ॥ जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थिता न्यरूपाणि ॥ ४ ॥ रूपिण:पुद्गला: ॥ ५ ॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६ ॥ निष्क्रियाणि च ॥ ॥ ७ ॥ असङ्ख्येया प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवा-नाम् ॥ ८ ॥ आकाशस्यानन्ता: । ९ । संख्ये-यासंख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥ १० ॥ नाणो ॥ ११ ॥ लोकाकाशेऽवगाह: ॥ १२ ॥ धर्माधर्म योः कृत्स्ने ॥ १३ ॥ एकप्रदेशादिषु भाज्य: पुद्गलानाम् ॥ १४ ॥ असङ्ख्येयभागादिषु जीवानाम् ॥ १५ ॥ प्रदेशसंहारविसर्पाभ्यां ।

प्रदीपवत् ॥ १६ ॥ गतिस्थित्युपग्रहो धर्माधर्म योरुपकार: १७ आकाशस्यावगाहः१८ शरीरवा ङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानाम् ॥ १९ ॥ सुख दु खजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥ २० ॥ परस्परो पग्रहो जीवानाम् ॥२१ ॥ वर्तनापरिणामक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥ २२ ॥ स्पर्शरस गंध वर्णवन्तः पुद्गला: ॥२३॥ शब्दबन्धसौक्ष्म्य स्थौल्यसंस्थानभेदतमश्छायातपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवस्कन्धाश्च ॥२५॥ भेदसंघातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥ २६ ॥ भेदादणु ।२७॥ भेदसंघाताभ्यां चाक्षुषः ॥२८॥ सद्द्रव्यलक्षणम् । ॥ २९ ॥ उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत ॥ ३० ॥ तद्भावाव्ययंनित्यम् ॥ ३१ ॥ अर्पितानर्पित सिद्धे ॥ ३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्बन्धः ॥३३॥ न जघन्यगुणानाम् ॥ ३४ ॥ गुणसाम्ये सदृशा

नाम्॥३५॥ द्व्यधिकादिगुणानां तु ॥३६॥बन्धे ऽधिकौ परिणामिकौ च ॥ ३७ ॥ गुणपर्याय वद्द्रव्यम् ॥ ३८ ॥ कालश्च ॥ ३९॥ सोऽनंतस मय॰॥४०॥द्रव्याश्रयानिर्गुणागुणाः॥४१॥तद्भावः परिणामः ॥ ४२ ॥

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पंचमोऽध्यायः

अथ षष्ठो ऽध्यायः ।

कायवाङ्मनःकर्मयोगः ॥ १ ॥ स आश्रवः ॥ २ ॥ शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ॥ ३ ॥ स कषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ॥ ४ ॥ इन्द्रियकषाया व्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्च-विंशतिसङ्ख्याः पूर्वस्यभेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्द ज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः ॥ ७ ॥ आद्यं

संरम्भसमारम्भारम्भ योग कृत कारितानुमत कषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकश ॥ ८ ॥ निवर्तनानिक्षेप सयोगनिसर्गाद्विचतुर्द्वित्रिभेदा परम् ॥ ९ ॥ तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तराया सादनोपघाताज्ञानदर्शनावरणयो ॥१०॥ दुःख शोकतापक्रंदनवधपरि देवनान्यात्मपरोभयस्था न्यसद्वेद्यस्य ॥ ११ ॥ भूतव्रत्यनुकम्पादानस रागसंयमादियोग क्षान्तिशौच मिति सद्वेद्यस्य ॥ १२ ॥ केवलिश्रुतसङ्घधर्मदेवा वर्णवादो दर्शनमोहस्य ॥ १३॥ कषायोदयात्तीव्रपरिणाम श्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ॥१५॥ माया तैर्यग्योनस्य ॥१६ अल्पारम्भपरिग्रहत्व मानुषस्य ॥१७॥ स्वभाव मार्दवं च ।१८। निःशीलव्रतत्व च सर्वेषाम्॥१९। सरागसंयमसंयमासंयमकामनिर्जरा बालतपो

सिद्धेवस्य॥२०॥सम्यक्त्वंच॥२१॥ योगवक्रताविसंवादनचाशुभस्य नाम्नः ॥२२॥ तद्विपरीतं शुभस्य ॥ २३ ॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतिचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग संवेगौ शक्तिस्त्यागतपसीसाधुसमाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्यवहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यका परिहाणिमार्गप्रभावनाप्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थंकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥ तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरणमन्तरायस्य ॥ २७ ॥

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्याय:।

अथ सप्तमोऽध्यायः।

हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।१। देशसर्वतोऽणुमहती ॥२॥ तत्स्थैर्यार्थंभावनाः पञ्चपञ्च ॥ ३ ॥ वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपण समित्यालोकितपानभोजनानिपञ्च ॥४॥ क्रोध लोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचि भाष णं च पञ्च ॥ ५ ॥ शून्यागारविमोचितावास परोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धि सधर्माविसंवादाः पञ्च ॥ ६ ॥ स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहराङ्ग निरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरसस्वशरीरसं स्कारत्यागाःपञ्च ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रिय विषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च ॥ ८ ॥ हिंसादि ष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ॥ ९ ॥ दुःखमेववा ॥ १० ॥ मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानिचसत्त्व

गुणाधिकक्लिश्यमानाविनेयेषु ॥११॥ जगत्का
यस्वभावौवासंवेगवैराग्यार्थम् ॥ १२ ॥ प्रमत्त
योगात्प्राणव्यपरोपणंहिंसा ॥ १३ ॥ असदभि
धानमनृतम् ॥ १४ ॥ अदत्तादानंस्तेयम्।१५
मैथुनमब्रह्म ॥ १६ ॥ मूर्छापरिग्रहः ॥ १७ ॥
निःशल्योव्रती ॥ १८ ॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥
अणुव्रतोऽगारी ॥ २० ॥ दिग्देशानर्थदण्डविरति
सामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोग परिमा-
णातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥ २१ ॥ मार
णान्तिकींसल्लेषनांजोषिता ॥ २२ ॥ शङ्काकां
क्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्य-
ग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रतशीलेषुपञ्चपञ्च
यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्धवधच्छेदाति भारारोप
णान्नपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेशरहो
ऽभ्याख्यानकूटलेख क्रियान्यासापहारसाकार

मन्त्रभेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगतदाहृतादान विरुद्ध राज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मान प्रति रूपकव्यवहाराः ॥ २७ ॥ परविवाहकरणेत्व रिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गक्रीडाकाम तीव्राभिनिवेशा २८ । क्षेत्रवास्तु हिरण्यसुवर्ण धनधान्यदासीदासकुप्य भाण्डप्रमाणातिक्रमाः ॥२९ ॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रमक्षेत्र वृद्धिस्मृत्य न्तराधानानि ॥ ३० ॥ आनयनप्रेष्यप्रयोग शब्दरूपानुपातपुद्गलक्षेपा ॥ ३१ ॥ कन्दर्प्प कौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोग परि भोगानर्थक्यानि ॥ ३२ ॥ योगदु प्रणिधानाना दरस्मृत्यनुपस्थापनानि ॥ ३३ ॥अप्रत्यवेक्षित प्रमार्जितोत्सर्गादानसंस्तराप क्रमणानादर स्मृ त्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सचित्तसम्बन्ध सन्मि श्राभिषवदुःपक्वाहाराः ॥ ३५ ॥

पिधानपरव्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ।३६। जीवितमरणशंसामित्रानुरागसुखानुबन्ध निदानानि ॥ ३७ ॥ अनुग्रहार्थंस्वस्यातिसर्गोदानम् ॥३८॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ।३९।

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥

अथ अष्टमोऽध्यायः ।

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगाबन्ध हेतवः ॥ १ ॥ सकषायत्वाज्जीवःकर्मणोयोग्यान्पुद्गलानादत्तेसबन्धः ॥ २ ॥ प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥३॥ आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥४। पञ्चनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्वि पञ्च भेदायथाक्रमम् ॥ ५ ॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानाम् ।६। चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां

निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचला-प्रचलास्त्यानगृद्धयश्च ॥ ७ ॥ सदसद्वेद्ये ॥ ८ ॥ दर्शनचारित्र मोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रिद्वि नव षोडशभेदाः ॥ सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायोहास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सा स्त्री पुंनपुंसकवेदा ॥ अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानसञ्ज्वलनविकल्पाश्चैकश ॥ क्रोध मानमायालोभा ॥ ९ ॥ नारकतैर्यग्योनमानुष दैवानि ॥ १० ॥ गतिजातिशरीराङ्गोपाङ्गनिर्माण बन्धनसङ्घातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्धवर्णानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघाता तपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतय प्रत्येकशरीरत्रसशुभगसुस्वर शुभसूक्ष्मपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्तिसेतराणि तीर्थकरत्वश्च ॥ ११ ॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥ १२ ॥ दान लाभभोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदि तस्ति

स्तृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरोपम कोटी कोटच परास्थितिः॥१४॥ सप्ततिर्मोहनीयस्य १५। विंशतिर्नामगोत्रयोः१६॥ त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ॥ १७ ॥ अपराद्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य ॥ १८ ॥ नामगोत्रयोरष्टौ॥ १९ ॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽनुभवः ॥ २१ ॥ स यथानाम ॥ २२ ॥ ततश्चनिर्जरा ॥ २३ ॥ नामप्रत्ययाः सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताःसर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः २४ ॥ सद्वेद्यःशुभायुर्नामगोत्राणिपुण्यम्॥२५॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

इतितत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्टमो ऽध्यायः

अथनवमोऽध्यायः

आश्रवनिरोध सम्वरः ॥ १ ॥ स गुप्तिस मितिधर्म्मानुप्रेक्षापरीषहजयचारित्रैः॥ २॥ तप सानिर्जरा च ।३। सम्यग्योगनिग्रहोगुप्ति ॥४॥ इर्य्याभाषैषणादाननिक्षेपोत्सर्गा समितयः ॥ ५ ॥ उत्तमक्षमामार्दवार्जवसत्यशौचसंयमतप स्त्यागाकिञ्चन्यब्रह्मचर्य्याणिधर्मः ॥ ६ ॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्याश्रव संवर निर्जरा लोकबोधदुर्लभधर्म्मस्वाख्याततत्त्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ॥ ७ ॥ मार्गाच्यवन निर्जरार्थं परिषोढव्याःपरीषहाः ॥ ८ ॥ क्षुत्पिपासाशीतोष्ण दंशमशकनाग्न्यारति स्त्रीचर्य्यानिषद्या शय्याक्रोशवध याञ्चना लाभरोगतृणस्पर्शमल सत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानादर्शनानि ॥ ९ ॥

सूक्ष्मसाम्परायछद्मस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०
एकादशजिने ॥ ११ ॥ बादरसाम्पराये सर्वे १२
ज्ञानावरणेप्रज्ञाज्ञाने ॥ १३ ॥ दर्शनमोहान्तरा
ययोरदर्शनालाभो ॥१४ ॥ चारित्रमोहेनाग्न्या
रतिस्त्री निषद्याक्रोशयाचनासत्कारपुरस्कारा:
॥ १५ ॥ वेदनीयेशेषा: ॥ १६ ॥ एकादयो
भाज्यायुगपदे कस्मिन्नेकोनविंशति ॥ १७ ॥
सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहारवि शुद्धिसूक्ष्म
साम्पराययथा ख्यातमितिचारित्रम् ॥ १८ ॥
अनशनावमोदर्य वृतिपरिसंख्यान रसपरित्याग
विविक्तशय्यासनकायक्लेशाबाह्यंतप: ॥ १९ ॥
प्रायश्चितविनयवैयावृत्य स्वाध्यायव्युत्सर्ग-
ध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥ नव चतुर्दशपञ्चद्वि-
भेदायथाक्रमंप्राग्ध्यानात् ॥ २१ । आलोचना
प्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्गतपश्छेद परि-

हारोपस्थापनाः २२॥ ज्ञानदर्शनचारित्रोपचाराः ॥२३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्विशैक्ष्यग्लानगण कुलसङ्घसाधुमनोज्ञानाम् ॥ २४ ॥ वाचना प्रच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥ बाह्या भ्यन्तरोपध्यो ॥ २६ ॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्र चिन्तानिरोधोध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥ २७ आर्त रौद्रधर्मशुक्लानि ॥ २८ ॥ परेमोक्षहेतु ॥ २९ आर्तममनोज्ञस्यसम्प्रयोगेतद्विप्रयोगाय स्मृति समन्वाहार ॥ ३० ॥ विपरीतंमनोज्ञस्य ॥३१॥ वेदनायाश्च ॥ ३२ ॥ निदानच ॥ ३३ ॥ तद विरतदेशविरतप्रमत्तसंयतानाम ॥ ३४ हिंसा नृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्योरौद्रमविरत देशविर तयोः ॥ ३५ ॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविच- याय धर्म्मम् ॥ ३६ ॥ शुक्ले चाद्येपूर्वविदः ॥३७ परेकेवलिन ॥ ३८ ॥ पृथक्त्वैकत्ववितर्कसूक्ष्म

क्रिया प्रतिपातिव्युपरतक्रियानि वर्तीनि ॥ ३९ ॥ त्र्येकयोगकाय योगायोगानाम् ॥ ॥ ४० ॥ एकाश्रयेसवितर्कवीचारेपूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारंद्वितीयम् ॥ ४२ ॥ वितर्कःश्रुतम् ।४३ वीचारोऽर्थव्यञ्जनयोगसंक्रान्तिः ॥ ४४ ॥ सम्यग्दृष्टिश्रावक विरतानन्तवियोजकदर्शनमोह क्षपकोपशमकोप शान्तमोहक्षपकक्षीणमोहजिनाःक्रमशोऽसङ्ख्येयगुणानिर्जराः ॥ ४५ ॥ पुलाकबकुशकुशीलनिर्ग्रन्थस्नातकानिर्ग्रन्थाः ।४६। संयमश्रुतप्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योप पादस्थानविकल्पतःसाध्याः ॥ ४७ ॥

इतितत्वार्थाधिगमेमोक्षशास्त्रेनवमोऽध्यायः

अथ दशमोऽध्यायः ॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरायक्षयाच्च-

केवलम् ॥ १ ॥ बन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यांकृत्स्न कर्मविप्रमोक्षोमोक्षः ॥ २ ॥ औपशमिकादि भव्यत्वानांच ॥ ३ ॥ अन्यत्रकेवलसम्यक्त्व ज्ञानदर्शनसिद्धत्वेभ्यः ॥४॥ तदनन्तरमूर्ध्वंगच्छं त्यालोकान्तात् ॥५॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्ध च्छेदात्तथागतिपरिणामाच्च ॥ ६ ॥ आविद्ध कुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाबुवदेरण्डबीजव दग्नि शिखावच्च ॥७॥ धर्मास्तिकाया भावात् ॥ ८ ॥ क्षेत्रकालगतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबु-द्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसङ्ख्याल्पबहुत्वत साध्याः ॥ ९ ॥

इति श्रीतत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनम् । व्यञ्जनसन्धिविवर्जितरेफम् ॥ साधुभिरत्रममक्षतव्यम् । कोन विमुह्यतिशास्त्रसमुद्रे ॥ १ ॥ दशाध्यायपरि

छिन्ने तत्वार्थैपठितेसति ॥ फलंस्यादुपवासस्य भाषितंमुनिपुङ्गवैः ॥ २ ॥ तत्वार्थसूत्रकर्तारं गृध्रपिच्छोपलक्षितम् ॥ वन्देगणेन्द्रसंयातम्मु मास्वामिमुनीश्वरम् ॥ ३ ॥ पढमचउक्केपढमं पञ्चमेजाणिपुग्गलंतच्चं छहसतमेसु आसव अट्ठमेवन्धचणादव्वम ॥ ४ ॥ नवमेसंवरनिज्जर दहमेमोक्खवियाणाहिएसतनच्वंभणिया । दस सत्तेणवरिट्ठहि ॥ ५ ॥ जंसक्कइतंकीरईजञ्चन सक्केयतंचसद्दहणंसद्दहमाणोजीवोपावई अयरा मरंठाणम् ॥६॥ तवयरणंवयधरणसंयमसरणं च जीवदयाकरणं अन्तेसमाहिमरणञ्चउगइदु- क्खंनिवारेई ॥ ७ ॥ अरिहन्तभासियत्थं। गण हरदेवगुन्थयंसम्मं । पणिमामिभत्तियुत्तो । सुद णाणमहीवहंसिरसा ॥ इति ॥

भक्तामरभाषा।

दोहा।

आदिपुरुष आदीशजिन,आदि सुविधि करतार
धर्म्म धुरन्धर परमगुरु,नमू आदि अवतार ॥१

चौपाई

सुरनर मुकुट रतन छवि करें। अन्तर पाप तिमर सब हरें॥ जिनपद वंदूं मनवच काय। भव जल पतित उद्धरण सहाय ॥ २ ॥ श्रुति पारग इन्द्रादिक देव। जाकी थुति कीनी कर सेव॥ शब्द मनोहर अर्थविशाल। तिस प्रभुकी वरणूं गुणमाल ॥३॥ विबुध वंद्यपद में मतहीन। होय निलज थुति मनशा कीन॥ जलप्रतिबिम्ब

---

१ तिमर—अन्धेरा। भव—संसार। विबुध—देवता।

बुद्ध को गहै । शशिमंडल वालकही चहै ॥४॥
गुणसमुद्र तुमगुण अविकार । कहत न सुर-
गुरु पावैपार । प्रलय पवन उद्धत जलजन्तु ।
जलधि तिरैको भुजबलवंत ।५। सोमैं शक्तिहीन
थुतिकरूं । भक्तिभाववश कुछ नहिं डरूं ॥ ज्यों
मृग निजसुतपालन हेत । मृगपति सन्मुख
जाय अचेत ।६। मैं शठ सुधी हसन को धाम ।
तवमुझभक्ति बुलावै राम॥ ज्योंपिक अम्बकली
परभाव । मधु ऋतु मधुर करै आराव ।७। तुम
यश जंपत जिन छिन माहिं । जन्म जन्म के पाप
नसाय ॥ ज्यों रवि उदय फटै तत्काल । अलि
वतनील निशातम जाल॥८॥ तुमप्रभावतैं करहूं
विचार । होसी यह थुति जनमनहार ॥ ज्यूं

---

७ पिक—कोयल । मधु=वसन्त ऋतु ।
आराव—सुन्दर शब्द ।

जल कमल पत्र पै परे। मुक्ताफल की दुति विस्तरे।९। तुमगुण महिमा हत दुखदोष। सो तो दूर रहो सुखपोष॥ पापविनाशक है तुम नाम। कमल विकाशी ज्यों रविधाम॥१०॥ नहिं अचम जो होय तुरत। तुमसे तुमगुण वरणत संत॥ जो आधीन को आप समान। करे न सो निंदित धनवान॥११॥ इकटक जन तुमको अविलोय। और विषैरति करे न सोय॥ कोकर क्षीर जलधि जलपान। खारनीर पीवं मतिमान १२॥ तुमप्रभु वीतरागगुण लीन। जिन परमाणु देह तुम कीन॥ हैं तितनेही ते परमाणु (न)। यातें तुमसम रूप न आन।१३। कहां तुममुख अनुपम अविकार। सुरनरनाग नयन मनहार॥ कहांचंद्र

---

१ रविधाम—सूर्य का तेज। १२ अविलोय—देखे।

मंडल सकलंक। दिनमें ढाकपत्र समरंक ॥ १४
पूर्णचन्द्र ज्योति छबिवंत। तुमगुण तीनजगत
लाघंत॥एक नाथते तुम आधार। तिनविचरते
को करैनिवार १५॥ जो सुरतिय विभ्रमआरंभ।
मन न डिग्यो तुम तौन अचंभ। अचल चलावे
प्रलय समीर। मेरुसिषर डिग मगैनधीर ॥१६
धूमरहित बाती गतिनेह। प्रकाशक त्रिभु-
वन घरएह ॥ वात गम्य नाहीं प्रचण्ड। अपर-
दीप तुम बलै अखण्ड १७। छिपहुनलुपहुराहुकी
छाहि। जगपरकाशक हो छिनमाहिं। घन अन
वर्त्त दाह विनिवार। रवितें अधिकधरो गुण-
सार १८। सदाउदित विदलित तममोह। विघ-

१६ सुरतिय—देवों की स्त्रियें।

१८ राहु—वह ग्रह जो चाद सूर्य को ग्रसे है।
घन अनवर्त—बादलों से न छुपने वाला।

टित मेघराहु अवरोह ॥ तुममुखकमल अपूरब चंद । जगत् विकाशी ज्योति अमद ॥१९
निशिदिन शशि रविको नहिं काम । तुम मुख चन्द हरे तमधाम ॥जो स्वभाव तें उपजे नाज। सजल मेघतें कौनहु काज।२०। जो सुबोध सो है तुम माहिं । हरिहर आदिक में सो नाहिं॥ जो दुतिमहारत्नमेंहाय।काचखंड पावैनहिंसोय२१

मारावा छंद।

सराग देव देख में भला विशेष मानिया।
स्वरूप जाहि देख वीतराग तू पिछानिया
कछू न ताहि देखके जहां तुही विशेषिया।
मनोज्ञ चित्तचोर और भूलहू न देखिया २२॥
अनेक पुत्रवन्तनी नितम्बिनी सपूत हैं।
न तो समान पुत्र और मात तें प्रसूत हैं।

२२। मनोज्ञ = सुन्दर।

दिशा धरन्त तारका अनेक कोटको गिने।
दिनेश तेजवन्त एक पूर्व ही दिशा जने।२३।
पुराण हो पुमान् हो पुनीत पुण्यवान् हो ।
कहैं मुनीश अन्धकार नाशको सुभान हो॥
महन्त तोहि जान के न होंय वश्य काल के
न और मोष मोषपंथ देव तोहि टालके॥२४
अनन्त नित्य चित्त की अगम्यरम्य आदि हो।
असंख्य सर्वव्यापि विष्णु ब्रह्म हो अनादि हो॥
महेश काम केतु योग ईश योग ज्ञान हो।
अनेक एक ज्ञानरूप शुद्ध संतमान हो॥ २५
तुमी जिनेश बुद्ध हो सुबुद्धि के प्रमान तैं ।
तुमी जिनेश शंकरो जगत्त्रयी विधान तैं ॥

२३। दिनेश—दिन का (सूर्य)
२४। सुभान—सुन्दर सूर्य। २५ जगत्त्रयी—तीनलोक (स्वर्गमर्त्यपाताल ये तीन लोक)

तुही विधात है सही सुमोक्ष पथ धारतें ।
नरोत्तमो तुही प्रसिद्ध अर्थके विचारतें २६॥
नमों करू जिनेश तोहि आपदा निवार हो ।
नमो करूं सुभूरि भूमिलोक के सिंगार हो ।
नमो करूं भवाब्धि नीर रास सोख हेतु हो ॥
नमो करू महेश तोहि मोक्ष पथ देत हो ॥२७

चौपाई ।

तुम पूरण जिन गुण गण भरे । दोष गर्भकर तुम परिहरे ॥ और देवगण आश्रय पाय । सुपन न देखेतुम फिर आय ।२८। तरुअशोक तळकिरण उदार । तुम तन शोभित है अविकार ॥ मेघ निकट ज्यों तेज फुरन्त । दिनकरदिपे तिमिर नासन्त २९॥ सिंहासन मणिकिरण विचित्र । तिसपर कंचन वरण पवित्र ॥ तुमतन शोभित

किरण विथार। ज्यों उदयाचल रवि तमहार ३०
कुन्दपहुप शित चमर ढुलत। कनकबरणतुम
तन शोभंत॥ ज्यों सुमेरु तट निर्मल कान्ति।
झरणाझरैं नीर उमगांति।३१। ऊंचे रहैं सूर दुति
लोप। तीन छत्र तुम दिपै अगोप॥ तीनलोक
की प्रभुता कहैं। मोती झालर सों छवि लहैं ३२॥
दुन्दुभि शब्द गहर गम्भीर। चहुं दिशिहोय
तुम्हारे धीर॥ त्रिभुवन जन शिव संगम करैं।
मानो जयजय रव उच्चरैं ३३ मंद पवन गंधोदक
इष्ट। विविध कल्पतरु पहुप सुवृष्ट॥ देव करैं
विकसितदलसार। मानो द्विजपंकतिअवतार३४
तुमतन भामंडल जिम चद। सव दुतिवन्त
करत है मन्द॥ कोटिशंख रवितेज छिपाय।

३०। रवि—सूर्य। तम—अंधेरा। ३१। सूर—सूर्य।
३४। द्विजपंक्ति—दांतों की पांत।

शशि निर्मल निशकरय अछाय।३५। स्वर्ग मोक्ष मारग सकेत। परम धर्म उपदेशन हेत॥ दिव्य वचन सुम खिरे अगाध। सब भाषा गर्भित हितसाध॥ ३६॥

दोहा—विकसित सुवरण कमल द्युति, नख द्युति मिलयमकाहिं। सुम पद पदवी जहिं धरें, तहिं सुर कमल रचाहिं।३७। ऐसी महिमा सुमविषे और धरे नहिं कोय। सूरज में जो जोति है नहिं तारागण होय॥ ३८॥

॥ छप्पे दोहा पतरीबाइन्द ॥

चाल डाल किंकल्परु कीखूनी हाथी दुःख।

निवारण

मद अवलिप्त कपोल मूल अलिकुल झंकारें तिन सुन शब्द प्रचंड क्रोध उद्धत गतिधारें।

१०। पदवी — मार्ग (रास्ता)।

काल वर्ण विकराल कालवत सन्मुख आवैं ॥
ऐरापत सो प्रबल सकलजनभय उपजावे ॥
देख गयन्द न भयकरै तुम पद महिमा लीन ।
विपतिरहित सम्पतिसहितवरतैभक्तिअधीन ३९

शेर दुःख निवार्ण काव्य ।

अति मयमत्त गयंद । कुम्भथल नखन विदारें ॥
मोती रक्त समेत । डार भूतल सिंगारें ॥
बांकी दाढ़ विशाल । बदन में रसना लोलै ॥
भीम भयानक रूप देख । जन थरहर डोलै ।
ऐसे मृगपति पगतलै । जो नर आया होय ॥
शरण गहैं तुम चरणकी । बाधा करे न सोय ॥४०

अगननिवार्ण काव्य ।

प्रलय पवन कर उठी । आग ज्यों तास पटन्तर

---

४० । रसना — जिह्वा (जीभ) ।

धमें फुलिंग शिखा । उतग पर जलै निरन्तर॥
जगत्समस्त निगल्लके । भस्मकरेगी मानो ॥
सडतडाट दावानल । जोरचहुं दिशा उठानों।
सो इक छिन में उपशमें । नाम नीर तुम लेत ॥
होय सरोवर परिण में । विकसतकमल समेत ४१
कोकिलकंठ समान । श्याम तन क्रोध जलन्ता ॥
रक्त नयन फुंकार । मारविष फणि उगलन्ता ॥
फण को ऊंचा करै । वेगही सन्मुख धाया ॥
तब जन होय निशंक । वृम्यफणपति को आया॥
जोडके निज पांव में । व्यापे विष न लगार।
नाग दमन तुम नामकी । है जिनके आधार ४२

युद्धनिवारण काव्य

जिस रणमाहिं भयानक शब्द कर रहे तुरंगम।

४१ । फुलिंग (स्फुलिंग) – आग का कणाँ(चिंगाड़ा)
४२ । आधार – आधान (सहारा) [illegible]

घन से गज गरजाहिं। मत्त मानो गिरिजंगम॥
अति कोलाहल मांहि। बात जहां नाहिं सुनीजै।
राजन को परचंड। देख बल धीरज छीजै॥
नाथ तुम्हारे नाम तें। सो छिन माहिं पलाय।
ज्यों दिनकर परकाशतें। अंधकार विनशाय ४३

मारे जहां गयन्द। कुम्भ हथिहार विदारे।
उमगे रुधिर प्रवाह। वेग जल से विस्तारे॥
होय तिरण असमर्थ। महा योधा बल पूरे।
तिस रण में जिन तोय। भक्त जे हैं रणसूरे॥
दुर्जय अरिकुल जीतकै। जय पावें निकलंक।
तुम पदपंकज मन वसे। ते नर सदा निशंक४४

जलदुखनिवारण काव्य॥

नक्र चक्र मगरादि। मच्छ कर भय उपजावें॥

४३। गिरिजंगम = चलनेवाला पहाड।

४४ नक्र = नाकू। चक्र = समूह।

धर्में फुलिंग शिखा। उतग पर जले निरन्तर॥
जगत्समस्त निगल्लके। भस्मकरेगी मानो॥
तड़तड़ाट दावानल। जोरचहुं दिशा उठानों।
सो इक छिन में उपशमें। नाम नीर तुम लेत॥
होय सरोवर परिण में। विकसतकमल समेत ४१
कोकिलकंठ समान। श्याम तन क्रोध जलन्ता॥
रक्त नयन फुंकार। मारविष कणि उगलन्ता॥
फण को ऊंचा करे। वेगही सन्मुख धाया॥
तब जन होय निशक। देखफणपति को आया॥
ओढके निज पाव में। व्यापे विष न लगार।
नाग दमन तुम नामकी। है जिनके आधार ४२

युद्धनिवर्त काव्य

जिस रणमाहिं भयानक शब्द कर रहे तुरंगम।

४१। फुलिंग (स्फुलिंग) — आग का कण (चिंगारी)

४२। आधार — आश्रय (सहारा) [illegible]

घन से गज गरजाहिं । मत्त मानो गिरिजंगम ॥
अति कोलाहल मांहि। बात जहां नाहिं सुनीजै।
राजन को परचंड । देख बल धीरज छीजै ॥
नाथ तुम्हारे नाम तैं । सो छिन माहिं पलाय ।
ज्यों दिनकर परकाशतैं। अंधकार विनशाय ४३
मारे जहां गयन्द । कुम्भ हथिहार विदारे ।
उमगे रुधिर प्रवाह । बेग जल से विस्तारे ॥
होय तिरण असमर्थ । महा योधा बल पूरे ।
तिस रण में जिन तोय । भक्त जे हैं रणसूरे ॥
दुर्जय अरिकुल जीतकै । जय पावैं निकलंक ।
तुम पदपंकज मन वसे । ते नर सदा निशंक४४

जलदुखनिवारण काव्य ॥

नक्र चक्र मगरादि । मच्छ कर भय उपजावें ॥

---

४३ । गिरिजंगम = चलनेवाला पहाड ।

४४ नक्र = नाकू । चक्र = समूह ।

जामें षडवा अग्नि । तेजनिध नीर जलावें ॥
पार न पावें जास थाह नहिं लहिये जानी ॥
गरजें अति गंभार । लहर की गिनत न ताकी॥
सुखसों तिरें समुद्रको । जे तुम गुण सुमिराहिं॥
लोलकलोलन केशिखर । पारयान लजाहिं॥४५

रोगनिवारण काव्य।

महानल दर ‹ा । भारपीड़ित नर जे हैं ॥
वातपित कफ कुष्ट । आदि जा रोग गहे है ॥
सोचत रहें उदास । नाहिं जीवन की आशा॥
अति घिनावनि देह । धर दुर्गन्ध निवासा ॥
तुम पदपंकज धूलको । जो लावे निज अंग ॥
ते नीरोग शरीर लहि । छिनमें होंय अनंग॥४६

४६। अनंग – जिसका अंग नहीं अर्थात् कामदेव भाषामें कामदेवके समान सुन्दर॥

कैदनिवारण काव्य ।

पांव कंठ तैं जकर । बांध सांकल अतिभारी ॥
गाढ़ी वेड़ी पैर माहि । जिन जांघ विदारी ॥
भूख प्यास चिंता शरीर । दुख जो विललाने ॥
शरण नाहि जिन कोय । भूप के वन्दीखाने ॥
तुम सुमरत स्वयमेवही । वधन सब खुलजाहिं
छिनमेंतेसम्पतिलहैं । चिंता भय विनसाहि ४७

महामत्त गजराज । और मृगराज दवानल ॥
फणपति रण परचण्ड । नीर निधि रोग महाबल
वन्धन ये भय आठ । डरप कर मानों नाशैं ॥
तुम सुमरत छिन माहिं । अभय थानक परकाशैं
इस अपार संसार में । शरण नाहिं प्रभु कोय ॥
यातैं तुम पद भक्त को । भक्ति सहाई होय।४८।

---

४७ स्वयमेव = अपने आपही ।

४८ । मृगराज = सिंह ।

यह गुण माल विशाल। नाथ तुमगुणनसमारी
विविध वर्णमय पहुप। गूंथ में भक्ति वियारी।
जे नर पहिरैं कण्ठ। भावना मन में भावैं॥
मानतुंग ते निजाधीन। शिवकमला पावैं॥४९

दोहा।

भाषा भक्तामर कियो। हेमराज हित हेत॥
जे नर पढ़ें सुभाव सों। ते पावैं शिव खेत॥५०

॥ इति ॥

श्री भक्तामर भाषा सम्पूर्णम्।

४८। शिवकमला — शिव अर्थात् मुक्ति की, कमला अर्थात् लक्ष्मी॥

परमार्थजकड़ी

दौलतराम कृत

वृषमादि जिनेश्वर ध्याऊं। शारद अम्बा चित लाऊं। दो विधि परिग्रह परिहारी । गुरु नमो स्वपर हितकारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु परखि निज उर लाइये। दुःख-दाय कुपथ विहाय शिव सुख दाय जिनवृष ध्याइये। चिरसे कुमग पगि मोह ठगकर ठगो भव कानन परो। चौरासीलख नितयोनि में जरामरण जन्मन दौं जरो ॥ १ ॥ मोह रिपुने दई है घुमरिया। तिसवश निगोद में परिया । तहां स्वास एकके माहीं। अष्टादश मरण लहाहीं लहिमरण एकमुहूर्त में छासठसहस्र शत तीन हीं। शठ तीन काल अनन्त यों दुःख सहे उपमाही नहीं॥ कवहुं लही वर आयु क्षिति जलपवन पावक तरुतनी। तसुभेद किंचित् कहूं सो मुनिकह्यो जो गौतम गणी ॥ २ ॥ पृथिवी दो भेद बखान। मृदुमाटी कठिन पाषाण। मृदु द्वादश सहस्र वरस की पाहन बाईस सहस की। पुन॰ सहस्र सात कही उदक भय सहस्र सही है समीर

की। दिन तीन पावक दशा सहैस तन मनिति ना तसु पीर की। बिन घात सूक्ष्म देहधारी घातयुत गुरु तन कहो। दर्हां जानन तापम स्कन्ध बिजन छेद भेदम पुगन लहो॥ ३॥ संस्कादि वो १द्रोमासी तिथि द्वादश वर्ष पचासी॥ भूमादि तेईन्द्रिय हैं ते। वासर उनचास जियेंते। कीवे वर्ष दश भवि प्रमुख व्यालीस सहस उरगतनी। काग की वहचार सहस नष पूर्वांग सरीसृप की भनी। नर मत्स्य पूर्वकोटिकी तिथि कर्म भूमि बखानिये। जलचर विकल बिन भोग भूचर पशु विपल्य प्रमानिये॥ ४॥ भवसा करि नरक बसेरा। भुगता-तहांकष्टघनेरा। छेदें तिलतिल तन सारा। भेदें द्रुम पूति मझारा। मझार पद्मा नक पचावें धरें शूली ऊपरें। सींचे देह अमसार से कम कढ़ें मल मीढ़े करें। वैतरणी सरिता समझकर मति पुष्य तस्सेमन तन। अति भीमवन असि पत्रसमवल लगा पुगल देमे भनें॥ ५॥ तिसमें हिम गरमाई। मेघ सम छोड़ गमाई। तहां की धिति सिन्धु तनी है। यों पुण्य नरक भवनी है भवनी तहांकी से निकस कबहूं जन्म पायो नरो। सर्वांग सकुचित मति अपावन उदर जननी के परो। तहां बसोमुख जननी रसांश पकी लियो नव मास लो। तिस पीर में कोई सीर नाहीं सहै आप निकासल्यो॥६॥

जन्मत जो संकट पायो। रसना से जात न गायो। लहे बालपने दुःख भारी। तरुणापोलियो दुःख कारी॥ दुःखकार इष्टवियोग अशुभ सयोगशोक सरोगता। पर सेव ग्रीपमशीतपावससहै दुःख अति भोगता॥ काहू को त्रिय काहूकोवां धवकाहू सुता दुराचारिणी। काहू व्यसन रत पुत्र दुष्ट कलित्र के ऊपर ऋणी॥ ७॥ वृद्धापन के दुःख जेते। लखिये सव नैनां तेते। मुखलाल वहे तनहाले विनशक्ति न वसन सम्हाले। न सम्हाल जाको देह की तो कहो कथा वृष की कथा। तव ही अचानक यम ग्रसे यों मनुज जन्म गयो वृथा॥ काहू जन्म शुभठान किंचित् लियो पद चउ देव को। अभियोग किल्विष नाम पायो सहो दुःख परसेवको॥ ८॥ तहां देख महत्सुर ऋद्धी। झूरो कर विषयों गृद्धी। कव हूं परिवार नशानो। शोकाकुल ह्वो विलखानो। विलखाय अति जव मरण निकट सहो सकट मानसी। सुर विमन दुःखद लगो तवे जव लखी माल मलानसो। तवअमर वहु उपदेश दें समुझाइयो समझो न क्यों। मिथ्यात्व युत डिग कुगत पाई लहें फिरसो सुपद क्यों।९॥ यों चिर भवअटवीगाही। किंचित् साता न लहाई॥ जिनकथित धर्मनहीं जानो। पर में आपापनमानो॥ मानो न सम्यक् रत्नत्रय आतम अनात्म में फंसो। मिथ्या चरण दृग्

धाम रंजो आप नवग्रीवकवासी॥ पर धर्मो ना जिनकथित शिव मग पथ भ्रम मूले किया। बिन ज्ञान के दर्शन बिन सब गये सहजे तप किया॥ १०॥ अब मनुज पुण्य कमायो। कुल जाति विमल तू पायो॥ या मैं सुनसीखसपावे। विषयों से रतिमतिलावे। अबै पहारति विषय से वे विषय विषधर से डसो। ये देव मरण अनन्त इन को त्याग आतम रस चखो। या रस रसिक जन बसे शिव अब बसत फिर बसि हैं सही। दौलत स्वरचि पर विरचि सद्गुरु सीखनित उर धर सही॥ ११॥

इति श्री दौलतरामकृत छकढ़ी सम्पूर्ण।

अथ बाईस परीषह।

छप्पय।

क्षुधा[1] तृषा[2] हिम[3] उष्ण[4] दंसमंसक[5] दुख भारी। चित
चरया[6] तन अरति[7] नेह उपजावत नारी[8]॥ चरया[9] आसन[10]
शयन[11] दुष्टवायक[12] बध[13] बन्धन। याचें[14] नहीं[15] मलाम रोग[16]

१७ १८ १९ २०
तृण परस होय तन ॥ मल जनितमान सनमान वश *प्रज्ञा।
२१ २२
और अज्ञान कर। दरशन मलीन बाईस सब साधु परीषह
जान नर ॥ १ ॥

दोहा।

सूत्र पाठ अनुसार ये, कहे परीषह नाम।
इनके दुख जो मुनि सहैं, तिनप्रति सदा प्रणाम ॥२॥

पोमावतीछद। क्षुध परीषह (१)

अनसन ऊनोदर तप पोषत पक्षमास दिन बीत गये हैं। जो नहीं बने योग्य भिक्षा विधि सूख अंग सब शिथिल भये हैं। तब तहां दुस्सह भूखकी वेदन सहत साधु नहीं नेक नये हैं। तिनके चरण कमल प्रति प्रति दिन हाथ जोड़ हम शीश नये हैं ॥ ३ ॥

तृषा परीषह (२)

पराधीन मुनिवर को भिक्षा पर घर लेय कहैं कुछ

---

* प्रज्ञा, अति बुद्धि विद्या पंडिताई के मद रूपी परीषह को जीतें इनके होते हुये भी इनका मद और मान नहीं करें ॥

माहीं। प्रकृति विरुद्ध पारणा भुंजत बढ़त प्यासकी त्रास तहाहीं। ग्रीषमकाल पित्त अतिकोपै लोचन दोय फिरैं जब जाहीं। नीर न चहैं सहैं ऐसे मुनि जयवन्ते वर्तो जगमाहीं ॥४॥

शीत परीषह (३)

शीत काल सबही जन कम्पैं खड़े जहाँ वन वृक्ष डहे हैं। झंझा वायु बहै वर्षाऋतु वर्षत बादल झूम रहे हैं। तहाँ धीर तटनी तट चौपट ताल पाल पर कर्म दहे हैं। सहैं सम्हाल शीत की बाधा ते मुनि तारण तरण कहे हैं ॥५॥

उष्ण परीषह (४)

भूख प्यास पीड़ै उर अन्तर प्रजलै आंत देह सब दागै। अग्नि स्वरूप धूप ग्रीषम की ताती बाल झालसी लागै। तपै पहाड़ ताप तन उपजै कोपै पित्त दाह ज्वर जागै। इत्यादिक गर्मी की बाधा सहैं साधु धीरज नहीं त्यागै ॥६॥

दन्समशक परीषह (५)

दंस मशक माखी तनु काटैं पीड़ैं बन पक्षी बहुतेरे डसैं व्याल विषहारे बिच्छू लगैं खजूरे आन घनेरे। सिंह स्याल शुंडाल सतावैं रीछ रोझ दुख देहिं घनेरे। ऐसे कष्ट सहैं समभावन ते मुनिराज हरो अघ मेरे ॥७॥

नग्न परीषह (६)

अन्तर विषय वासना वरतै बाहरलोक लाज भय भारी। यातैं परम दिगम्बर मुद्रा धर नहिंसकैं दीन संसारी। ऐसो दुर्द्धर नगन परीषह जीतैं साधुशील व्रतधारी। निर्विकार बालकवत निर्भय तिनके पायन धोक हमारी॥ ८॥

अरति परीषह (७)

देशकाल का कारण लहिकै होत अचैन अनेक प्रकारैं। तब तहां खिन्न होय जगवासी कलमलाय थिरतापद छाडैं। ऐसो अरति परीषह उपजत तहां धीर धीरज उरधारैं। ऐसे साधुन को उर अंतर वसो निरन्तर नाम हमारे॥ ९॥

स्त्री परीषह (८)

जो प्रधान केहरि को पकड पन्नग पकड़ पानसे चंपत जिनकी तनकदेख भौं बांको कोटिन सूर दीनता जम्पत। ऐसे पुरुष पहाड उठावन प्रलय पवन त्रिय वेदपयम्पत। धन्य २ वे साध साहसी मन सुमेर जिनका नहीं कम्पत॥ १०॥

चर्या परीषह (९)

चार हाथ परिमाण निरख पथ चलत दृष्टि इत उत नहीं तानें। कोमल पांय कठिन धरतीपर धरतधीर बाधा

कहीं मानैं। नाग तुरंग पालकी चढ़ते ते सवाद उर याद न आनैं। यों मुनिराज सहैं चर्या दुख तब दृढ़ कर्म कुलाचल भानैं ॥११॥

आसन परीषह (१०)

गुफा मसान शैल तरु कोटर निवसैं जहाँ शुद्ध भू हेरैं। परिमितकाल रहैं निश्चलतन बारबार आसन नहिं फेरैं। मानुषदेव अचेतन पशुकृत बैठे विपति आन जब घेरैं। ठौर न तजैं भजैं थिरतापद ते गुरु सदा बसो उर मेरे ॥ १२

शयन परीषह (११)

जो महान सोनेके महलन सुन्दर सेज सोय सुख जोवैं। ते अब अचल अंग एकासन कोमल कठिन भूमिपर सोवैं॥ पाहनखंड कठोर कांकरी गड़त कोरकायर नहीं होवैं। ऐसी शयन परीषह जीतैं ते मुनिकर्म कालिमाधोवैं ॥ १३ ॥

आक्रोश परीषह (१२)

जगत जीव यावन्त चराचर सबके हित सबको सुखदानी। तिन्हें देख दुर्वचन कहैं खल पाखंडी ठग यह अभिमानी। मारोयाहि पकड़ पापीको तपसी भेष चोर है छानी। ऐसे वचन बाणकी बरखा क्षमा ढाल ओढ़ैं मुनि ज्ञानी।१४॥

वध बन्धन परीषह (१३)

निर पराध निर्वैर महामुनि तिनको दुष्ट लोग मिल मारैं। कोई खैंच खंभसे बांधै कोई पावकमें पर जारैं। तहां कोप नहीं करें कदाचित पूर्व कर्म विपाक विचारैं। समरथ होय सहैं वध बंधनते गुरु भव भव शरण हमारैं॥ १५॥

यांचना परीषह (१४)

घोर वीर तप करत तपोधन भयेक्षीण सूखो गलवाहीं। अस्थि चाम अव शेप रहो तन नसाजाल झलकैं तिसमाहीं। औषधि अशन पान इत्यादिक प्राण जांय पर याचत नाहीं। दुर्द्धर अयाचीक व्रत धारैंकरै नहीं मलिनधरमपरछाहीं॥१६॥

अलाभ परीषह (१५)

एकवार भोजनकी वेलां मौनसाध वस्तो में आवें। जो नहीं बने योग्य भिक्षाविधि तो महन्त मन खेद न लावें॥ ऐसे भ्रमत बहुत दिन बीतें तव तपवृद्धि भावना भावैं। यों अलाभ की परम परीपह सहे साधु सोही शिव पावैं॥१७

रोग परीपह (१६)

वात पित्त कफ श्रोणित चारों ये जब घटे बढैं. तनु माहीं। रोग सयोग शोक जब उपजत जगत जीव कायर

हाथाहीं॥ ऐसी व्याधि वेदना दारुण सहैं सूर उपचार न चाहैं। आतमलीन विरक्त देहसों जैनयती निज नेम निबाहैं॥ १८॥

तृणस्पर्श परीषह (१७)

सूखेतृण अरु तीक्षणकाटे कठिन कांकरीपांय विदारैं। रजउडआनपडै लोचन में तीर फांस तनु पीर विथारैं। तापर पर सहाय नहीं वाछत अपने करसों काढ न डारैं। यों तृण स्परस परीषह विजयी ते गुरुभव २ शरण हमारे १९

मल परीषह (१८)

यावज्जीव जल न्हौंन तजा जिन नग्न रूप वन थान खड़े हैं। चलै पसेव धूपकी वेला उड़त धूल सब अंग भरे हैं। मलिन शरीरकी ममदामनिमित्तभाव उरनाहि करैं हैं। यों मल जनित परीषह जीत तिन्हें हम सीस धरें हैं॥२०॥

सत्कार पुरस्कार परीषह (१९)

जो महान विद्यानिधि विजयी चिर तपसी गुण अतुल भरे हैं। तिनकी विनय वचन से अथवा उठ प्रणाम जन नाहि करैं हैं। तो मुनीश मन क्षेद न मानत उर मलीनता

भाव हरे हैं। ऐसे परम साधु के अहोनिशि हाथ जोड़ हम पांय परे हैं ॥ २१ ॥

प्रज्ञा परीषह (२०)

तर्क छंद व्याकरण कलानिधि आगम अलंकार पढ़ जानैं। जाकी सुमति देख परवादी विलखे होंय लाज उर आनैं ॥ जैसे सुनतनाद केहरिका वनगयद भाजत भयमानैं। ऐसी महाबुद्धि के भाजन पर मुनीश मद रंच न ठानैं ॥२२॥

अज्ञान परीषह (२१)

सावधान वर्तें निशिवासर संयमशूर परम वैरागी। पालत गुप्ति गये दीर्घ दिन सकल संग ममता परित्यागी ॥ अवधि ज्ञान अथवा मन पर्य्यय केवल ऋद्धि न अजहूं जागी यों विकल्प नहीं करै तपोनिधि सो अज्ञान विजयी बड़-भागी ॥ २३ ॥

अदर्शन परीषह (२२)

मैं चिरकाल घोर तप कीना अजों ऋद्धि अतिशय नहीं जागै। तपबल सिद्ध होत सब सुनियत सो कुछ बात झूठसी लगै। यों कदापि चितमें नहीं चितत समकित शुद्ध शांति

रख पागी। याई साधु मवर्हीम विज्ञपी ताके दर्शन से भय मागै॥ २४ ॥

किस २ कर्म के उदय से कौन २ परीषह होतो हैं।

घनाक्षरी छन्द।

ज्ञाना बरणीतें दोर महा भज्ञान हार एक महा मोहतें मदर्शन बखानिये। अन्तराय कर्म सेती उपजै मलाम दुख सप्त चारित्र मोहनी केवल जानिये॥ नागन नियध्या नारी मान सम्मानगारि यायना भरति सप्त ग्यारह ठीक ठानिये। एकादश बाकी नहीं पदमा उदय से कहीं बाईस परीषह उदय ऐसे उर मानिये॥ २ ॥

अडिल्ल छन्द॥

एकबार इनमाहि एकादि के कहो।
सब उन्नीस उत्कृष्ट उदय मार्ग सहो॥
आसन शयनविहाय दोयदम माहिकी।
शीत उष्णम एक तीन य नाहि की ॥ २१ ॥

॥ इति ॥
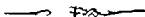
श्रीजिनेन्द्राय नमः ।

॥ पञ्चकल्याण मङ्गल ॥

———()———

प्रथम गर्भ कल्याण मंगल ॥

———

प्रणमूं पंच परम गुरु गुरु जिन शासनो ।
सकल सिद्धि दातार सो विघ्न विनाशनो ॥
शारद अरु गुरु गौतम सुमति प्रकाशनो ।
मङ्गल करहु चौसङ्घ हि पाप प्रनाशनो ॥
पाप प्रनाशन गुण हि गरुवे दोष अष्टादश रहो ।
धरध्यानकर्म विनाश केवलज्ञान अविचल जिनलहो ॥
प्रभुपञ्चकल्याणक विराजित सकल सुरनर ध्यावहीं ।
त्रैलोक्यनाथ सुदेव जिनवर जगत मंगलगावहीं ॥ १ ॥
जाके गर्भ कल्याणक धनपति आइयो ।
अवधि ज्ञान परमाण सो इन्द्र पठाइयो ।
रचि नव बारह योजन नगर सुहावनो ।
कनक रतन मणि मण्डित मंदिर अतिघनो ॥

अति घनो पौरि पगार पूरिखा सुबन उपवन सोहने।
नरनारि सुन्दर चतुर भेष सो देख जनमन मोहने॥
तहाँ जनकगृह छहमास प्रथमहि रतनधारा बरसियो।
पुनिरुचिकवासिनि जननी सेवा करहिं बहुविधिहरषियो।
सुर कुञ्जर सम कुञ्जर धवल धुरंधरो।
केहरि केसरि शोभित नख शिख सुन्दरो॥
कमला कलश न्हवन दोय दाम सुहावनो।
रवि शशि मण्डल मधुर मीन युग पावनो॥
पावन कनक घट युगम पूरण कमल सहित सरोवरो।
कल्लोल माला कुलित सागर सिंह पीठ मनोहरो॥

रमणीक अमर विमानफणिपति भवन भुविछवि छाजहिं।
रुचि रतन राशि दिपंति दहन सुतेज पुञ्ज विराजहीं॥

ये शुभ सोलह सपने सूती शयन में।
देखे माय मनोहर पिछली रैनि में॥
उठ प्रभात पिय पूछियो अवधि प्रकाशियो।
त्रिभुवन पति सुत होसी फल बह भासियो
भासियोफल तिहिंचिंत दम्पति परम आनन्दित भए।
छहमास परमवभास बीते रैनदिन सुख में गए॥

गर्भावतार महंत महिमा सुनत सब सुख पाइयो।
भणरूपचन्द्रसुदेव जिनवर जगत मंगल गाइयो ॥ ४ ॥

द्वितीय जन्म कल्याण मंगल।

मति श्रुतिअवधि विराजित जिनजब जनमियो
तीन लोक भये हर्षित सुरगण भरमियो ॥
कलप वासि घर घटा अनहद बाजियो।
ज्योतिषि घर हरिनाद सहज गल गाजियो ॥
गाजियो सहजही शङ्ख भावनभवन शब्द सुहावने।
व्यन्तर निलयपट पटहिं बाजे कहत कथा महिमावने ॥
कम्पे सुरासन अवधि बलजिन जन्म निश्चय जानियो।
धनराज तब गजराज माया मई निर्मय आनियो ॥ १ ॥
योजन लक्ष गजेन्द्र वदन शत निर्मए।
वदन वदन वसु दन्त दन्त-प्रति सर ठए ॥
सरप्रति सो पनवीस, कमलनी छाजहीं।
कमलनि कमलनि कमल पचीस विराजहीं ॥
राजतहिं कमल कमल अठोत्तर सौ मनोहर दलवने।
दलदलहिं अप्सरा नचहिं नव रस हाव भाव सुहावने ॥
मणि कनककिंकिणीवरविचित्रहियमरमंडित सोहिये।

दर्पणचमर कलशा पताका देख त्रिभुवन मोहिये ।
तिहिं करि हरि चढ़ आयो सब परिवार सौं ।
पुरहि प्रदच्छिण देतहि जिन जय कारसौं ॥
गुपति जाय जिन जननी सुख निद्रा रची ।
मायामय शिशु राखहि जिन आनौ शची ॥
आनौ शची जिन रूप देखत नयन तृपत नहीं भये ।
तब परम हर्षित हृदय हरि ने सहस लोचन करलिये ।
पुनः कर प्रणाम सुप्रथम इन्द्र उछंगधर प्रभु लीनये ।
ईशान इन्द्रसुचन्द्रछवि सिरछत्र प्रभुके दीनये ॥ ३ ॥
सनतकुमार महेन्द्र चमर दोउ ढारहीं ।
शेष शक्र जयकार शब्द उच्चारहीं ॥
उत्सव सहित चतुर विधि सुर हर्षित भए ।
जोजन सहस निन्यानवैं गगन उलंघ गए ॥
गए सुरगिरि जहां पांडुकवन विचित्रविराजहीं ।
पांडुकशिला तहां अर्द्धचन्द्र समान रविछवि लाजहीं ॥
जोजनपचास विशाल द्विगुण आयाम वसु ऊंचीगनी ।
वर अष्ट मंगल कनक कलशा सिंह पीठ सुहावनी ॥
रचि मणि मण्डप शोभितमध्य सिंहासनो ।
थाप्यो पूरब दिशा मुख प्रभु कमलासनो ॥

वाजहिं ताल मृदंग वेणु वीणाघने ।
दुन्दुभि प्रमुख मधुर ध्वनि बाजे साजने ॥
साजने वाजहिं सची सवमिलधवल मंगल गावहीं ।
जहां करैं नृत्यसुरांगना सब देव कौतुक लावहीं ॥
भरिक्षीरसागर जल जो हाथों हाथ सुरगिरि लावहीं ।
सौधर्मअरु ईशान इन्द्र सो कलश लेय प्रभु न्हवावहीं ॥
बदन उदर अवगाह कलश गत जानिये ।
एक चार वसु योजन मान प्रमाणिये ॥
सहस अठोत्तर कलश प्रभुजीके सिर ढुरैं ॥
फुन शृगार प्रमुख आचार सबै करैं ॥
कर प्रगटप्रभुमहिमामहोत्सव आन फुनमातहिं दयो ।
धनपतहि सेवाराख सुरपति आप सुरलोक हिं गयो ॥
जन्माभिषेक महंत महिमा सुनत सब सुख पावहीं ।
भनिरूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगत मंगल गावहीं ॥ ६ ॥

तृतीय दीक्षाकल्याण मंगल।

श्रम जल विना शरीर सदा सब मलरहित ।
क्षीर वरण वर रुधिर प्रथम आकृति सहित
प्रथम सार संहनन सुरूप विराजहीं ।

सहज सुगन्ध सुलक्षण मण्डित छाजहीं ॥
छाजैं अतुलबल परम प्रियहितमधुरवचन सुहावने ।
दश सहज अतिशय सुभग मूर्ति बालहीलकहावने ॥
आ बालकालत्रिलोकपतिमनरुचित उचित जो नित नये
अमरो पुनीत पुनीत अनुपम सकल भोगविभोगये ॥१॥
भवतन भोग विरक्त कदाचित चिन्तये ।
धन यौवन प्रिय पुत्र कलत्र अनित्य ये ॥
कोउ नहीं शरण मरण दिन दुख चहुंगति भरो ।
दुःखसुख एकही भुगतै जीयविधि वशपरो
परोविधिवश आन्यचेतन आन्य जड़ जो कलेवरा ।
तनअशुचि परतैंहोय आस्रव परिहरातैं संवरा ॥
निर्जरातपबलहोय सम्यक बिनसदा त्रिभुवन भ्रमो ।
दुर्लभविवेकबिना न कबही परम धर्म विषै रमो ॥
ते प्रभु बारह भावना भावन भाइयो ।
लौकान्तिक वरदेव नियोगहि आइयो ॥
कुसुमांजलि चरण कमल सिर नाईयो ।
स्वयम्बुद्धप्रभु थुतिकर तिन समझाईयो ॥
समझाय प्रभुको गये सुर पुर पुन महोत्सव हरिकियो ।
रचि रुचिर चित्रविचित्र शिविका आप नंदन वनलियो ॥

तहां,पंच मुष्टी लोंचकीनो प्रथमसिद्धहिं थुतिकरी।
मंडेमहाव्रतपंचदुद्धरसकल परिग्रह परिहरो ॥ ३ ॥

मणिमय भाजन केश धारकर सुरपति।
क्षीर समुद्र जल क्षेप गये अमरावती॥
तप संयम वल प्रभुजी को मन पर्य्य भयो।
मौन सहित तप करत काल कछु तहां गयो॥

गयो तहा कछु काल तप वल ऋद्धिवसु गुणसिद्धिया।
तहां धर्म ध्यानवलेन क्षयगई सप्त प्रकृति प्रसिद्धिया॥
क्षिपिसातवें गुणयत्न विन तहां तीन प्रकृतिजुबुधिवढ़े॥
करकरण तीन प्रथम शुकलवल क्षपक श्रेणी प्रभुजीचढ़े

प्रकृति छत्तीस नवें गुण थान विनाशियो।
दशवें सूक्षमलोम प्रकृति तहां नाशियो॥
शुक्लध्यान पद द्वितिय पुन' प्रभु पूरियो।
वारवें गुण सोलह प्रकृती चूरियो॥

चूरियो त्रेसठ प्रकृति या विधि घातिया कर्मोंतणी।
तपकियो ध्यान पर्यन्त वारह विधित्रिलोक शिरोमणी॥
निष्कर्मकल्याणक सुमहिमा सुनत सव सुख पाइयो।
भनिरूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगत मंगल गाइयो॥ ५॥

चतुर्थ ज्ञानकल्याण मंगल ।

तेरहवें गुण स्थान सयोग जिनेश्वरो ।
अनन्त चतुष्टय मंडित भये परमेश्वरो ।
समोशरण तब धनपति बहुविधि निर्मयो ।
आगम युक्ति प्रमाण गगन तल परिठयो ॥
परिठयोचित्र विचित्र मणिमय सभामण्डप सोहियो ।
तिहि मध्यबारह बने कोठे बनक सुरनर मोहियो ॥
मुनि कल्पवासिन अर्जिकाऽरु ज्योति भौन भवनत्रिया ।
पुनभवन व्यन्तर नभग सुरनर पशू कोठे बैठिया ॥१॥
मध्यप्रदेश तीन मणि पीठ तहाँ बने ।
गन्धकुटी सिंहासन कमल सुहावने ॥
तीन छत्र सिर शोभित त्रिभुवन मोहिये ।
अन्तरीक्ष कमलासन प्रभु तहाँ सोहिये ॥
सोहिये चौंसठ चमर ढुरहि अशोक तरु तहाँ छाजते ।
पुनदिव्यध्वनि प्रतिशब्द जिन तहाँ देव दुन्दुभी बाजते ॥
सुर पुष्प वृष्टि प्रभा मण्डल कोटि रवि छवि साजते ।
इम अष्ट अनुपम प्रातिहारिय वरविभूति विराजते ॥२॥
दो सौ योजन मान सुभिक्ष चहुँ दिशा ।

गगन गमन अरु प्राणी वध न अहो निशा ॥
निर उपसर्ग अहार रहित जिन पेखिये ।
आनन चार चहु दिश शोभित देखिये ॥
दीखैं अशेष विशेष विद्या विभव घर ईश्वर पनो ।
छाया विवर्जित शुद्ध स्फटिक समान तन प्रभु का बनो ।
नहि नयन पलक न लगैं कदाचित केश नख समछाजहीं ।
यह घातिया क्षय जनित अतिशय दशविचित्र विराजहीं ॥
सकल अर्थ मई मागधी भाषा जानिये ।
सकल जीव गत मैत्री भाव वखानिये ॥
सब ऋतु के फल फूल वनास्पति मन हरैं ।
दर्पण सम मणि अवनि पवन गति अनुसरैं ॥
अनुसरै परमानन्द सबको नारि नर जे सेवता ।
योजन प्रमाण धरा सम्हारत जात मारुत देवता ॥
फुन करहिं मेघ कुमार गन्धोदक सुवृष्टि सुहावनी ।
पद कमल तलसुर रचहिं कमलसोधरनिशशिशोभावनी
अमलगगण तलअरुदिशितिहि अनुसारही ।
चतुरनिकाई देव करैं जैकारहीं ॥
धर्म चक्र चलै आगै रवि जहां लाजहीं ।
सुन भृङ्गार प्रमुख वसु मंगल राजहीं ।

दशसहीदश अरु चार अतिशय देवरचित सुहावने।
जिनराज केवल ज्ञान महिमा और कहत कहावने॥
तब इन्द्र आन कियो महोत्सव सभा शोभित अतिबनी॥
धर्मोपदेश दियो तहां उचरी सुवाणी जिनतनी॥९॥
क्षुधा तृषा अरु राग द्वेष असुहावनो।
जन्म जरा अरु मरण त्रिदोष भयावनो॥
रोग शोक भय विस्मय अरु निद्रा घनी।
खेद स्वेद मद मोह अरति चिन्ता गनी॥
गनिये अठारह दोष तिन कर रहित देव निरञ्जनो।
नवपरम केवल लब्धि मण्डित शिवरमणीमनरंजनो॥
श्री ज्ञानकल्याणकसुमहिमा सुनत सब सुखपावही।
भणिरूपचन्द्र सुदेव जिनवर जगत मंगल गावही॥१०॥

पञ्चमनिर्वाण कल्याण मङ्गल।

केवल दृष्टि चराचर देख्यो सर्वदी।
भव्यनि प्रति उपदेश्यो जिन परदर्शदी।
भव भीत भविक जन शरणजे आईयो।
रत्नत्रय लक्षण शिव पन्थ पाईयो॥
पाईया शिवपथ अविक फल अमतृतीय शुक्लध्याने लयो।

तहां तेरवें गुणथान अन्त प्रकृति वहत्तर नाशियो ॥
चौदवें चौथे फल शुक्ल प्रभु वहतर तेरह जेहती।
हमघाति वसु विधि कर्म पहुचे समयमें पंचमगती ॥
लोक शिखर तनुवात वलय में जा ठयो।
धर्म द्रव्यविन आगे गमन न तिन भयो ॥
मदन रहित मुनवरतहां अम्वर जारिसो।
किमपि हीन निजतनु तै भये प्रभु तारिसो॥
तारिसो अविचलद्रव्य पर्ययमर्थ पर्यय क्षण क्षई।
निश्चयनयेन अनन्त गुण व्यवहारनयवसु गुणमई ॥
वस्तुः स्वभावविभावविरहित शुद्धपरणतिपरिणये।
चिद्रूप परमानन्दमण्डितशुद्ध परमातम भये ॥ २ ॥
तन परमाणू दामिन पर सव खिर गये।
रहे शेष नख केश रूप जे परिणये ॥
तव हरि प्रमुख चतुर्विधिसुरगण शव सचो
माया मय नख केश सहित प्रभु तनु रचो॥
रचि अगरचन्दन प्रमुखपरिमलद्रव्यजिनजय कारियो।
पदपतत अग्नि कुमार मुकटानल सुविधिसस्कारियो ॥
निर्वाण कल्याणक सुमहिमा सुनत अति सुख पाईयो।
भनिरूपचन्द्रसुदेव जिनवर जगत मंगल गाईयो ।३।

मैं मतहीन भगति वश भावना भाईयो।
मंगल गीत प्रबन्ध सो जिन गुण गाईयो॥
जो जन सुनहिं बखानहिं स्वरधर गावहीं।
मनोवाञ्छित फल सो नर निश्चय पावहीं॥
पावहीं आठों सिद्धि नवनिधि मन प्रतीति जो लावहीं।
भ्रमभावछूटहिं सकल मन के निज स्वरूप सो ध्यावहीं॥
पुनः हरहिं पातक टरहिं विघ्न सो होय मंगल नितनये।
भणिरूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंघहिजये॥४॥

श्री जिनायनमः।

भूधरजैनशतक।

श्रीऋषभदेवकी स्तुति।

पोमावती छन्द।

ज्ञान जहाज वैठ गणधरसे गुण पयोधि जिस नांहि तरे हैं।
अमर समूह आन अवनी[1] सों घस घस सीस प्रणामकरे हैं।
किधों भाल कुकर्म्म की रेखा दूर करन का बुद्धिधरे हैं।
ऐसे आदिनाथ के अहनिशि[2] हाथ जोर हम पांव परे हैं ॥१॥
कायउत्सर्ग मुद्रा धर वन में ठाडे ऋषभ रिद्धि तज दीनी।
निश्चल अङ्ग मेरु हि मानों दोनों भुजा छोर जिन लीनी।
फसे अनन्त जन्तु जग चहला दुःखी देख करुणा चित चीनो
काढन काज तिन्हें समरथ प्रभु किधौं बांह दीरघ यह कीनी॥२

(१) अवनी=जमीन (२) अहनिश=रात दिन।

मैं मतिहीन भगति वश भावना भाईयो।
मंगल गीत प्रबन्ध सो जिन गुण गाईयो॥
जो जन सुनहिं बखानहिं स्वरधर गावहीं।
मनोवाञ्छित फल सो नर निश्चय पावहीं॥
पावहीं आठौं सिद्धि नवनिधि मन प्रतीति जो लावहीं।
भ्रमभावछूटहिं सकल मन के जिन स्वरूप सो ध्यावहीं॥
पुनः हरहिं पातक टरहिं विघ्न सो होय मंगल नितनये।
भणिरूपचन्द्र त्रिलोकपति जिनदेव चौसंगहिजये ॥६॥

श्री जिनायनमः ।

भूधरजैनशतक ।

श्रीऋषभदेवकी स्तुति ।

पोमावती छन्द ।

ज्ञान जहाज बैठ गणधरसे गुण पयोधि जिस नांहि तरे हैं ।
अमर समूह आन अवनी सों घस घस सीस प्रणामकरे हैं ।
किधों भाल कुकर्म्म की रेखा दूर करन का बुद्धिधरे हैं ।
ऐसे आदिनाथ के अहनिशि हाथ जोर हम पांव परे हैं ॥१॥
कायउत्सर्ग मुद्रा धर वन में ठाडे ऋषभ रिद्धि तज दीनी ।
निश्चल अङ्ग मेरु हि मानों दोनों भुजा छोर जिन लीनी ।
फसे अनन्त जन्तु जग चहला दुःखी देख करुणा चित चीनी
काढन काज तिन्हें समरथ प्रभु किधौं बांह दीरघ यह कीनी॥२

(१) अवनी=जमीन (२) अहनिस=रात दिन ।

करनो कछू है न करतें कारज तातें पाणि प्रलम्ब करे हैं।
रह्यो न कछू पायन तें पैबो ताही तें पद नाहिं टरे हैं।
निरख चुके नैनन सब यातें नेन नासिका अनी धरे हैं।
कहा सुने कानन कानन यों जोग लीन जिन राज खरे हैं ॥ १॥

छप्पै छन्द ।

जयो नाभि भूपाल बाल सुकुमाल सुलक्षण।
जयो स्वर्ग पाताल पाल गुणमाल प्रतिक्षण।
दृगविशाल वरभाल लाल नखचरण विरज्जहिं।
रूप रसाल मराल चाल सुन्दर लख लज्जहिं।
रिपु जाल काल रिसहेशहम फसे जन्म जम्बालदह।
यातें निकाल बेहाल अति भो दयाल दुख टाल यह ॥२॥

श्रीचन्द्रप्रभप्रभुस्वामीकी स्तुति।

पोमावती छन्द।

चितवत वदन अमलचंद्रोपम तज चिन्ता चित होय अकामी।
त्रिभुवन चन्द्र पाप तप चन्दन नमत चरण चन्द्रादिक नामी।
तिहुँ जगछई चन्द्रिका कीरती चिह्नचन्द्र चिन्तत शिवगामी ॥
वन्दूं चतुर चकोर चन्द्रमा चन्द्र वरण चन्द्रप्रभुस्वामी ॥३॥

श्री शान्तिनाथ स्वामी की स्तुति।

मत्तगयन्द छन्द।

शान्ति जिनेश जयो जगतेश हरैं अघ ताप निशेश कि नांई।
सेवत पाय सुरासुर आय नमैं सिर नाय महीतल तांई।
मौलि विषे मणिनील दिपै प्रभु के चरणौं झलकै वहु झांई।
सूंघन पाय सरोज सुगन्धि किधौं चल के अलि पगति आंई॥६

श्री नेमिनाथ स्वामी की स्तुति।

घनाघरी छन्द।

शोभित प्रियग अंग देखे दुख होय भग लाजत अनंग जैसे दीप भानु भास तैं। वाल ब्रह्मचारी उग्रसेन की कुमारी जादों, नाथ तैं निकारी कर्म कादों दुखरास तैं। भीम भव कानन में आनन सहाय स्वामी अहो नेमिनामी तक आयो तुम्हैं तासतै। जैसे कृपासिधु वन जीवन की वन्द छोड़ि यौंहि दास की खलास कीजे भव फांस तैं॥७॥

श्रीपार्श्वनाथ स्वामी की स्तुति।

सिंहावलोकन अलंकार छप्पैछन्द स्तुति॥

जन्म जलधि जलयान जान जन हंस मानसर।

सर्व इन्द्र मिल नाम माल जिस धरें सीस पर ।
पर उपकारी बाल बाल उत्पन्न कुनय गन ।
भवसरोज बन भाम भान मम मोह तिमरघन ।
घन वर्ण देह दुख दाह हर हर्षत हेत मयूरमन ।
मन मत्तमतंग हरिपार्स जिन मन विसरहु छिन जगतजन ॥

श्रीवर्द्धमान अर्थात् महावीरस्वामी की स्तुति ।

दोहा छन्द ।

दृढ़ कर्माचल दलन पवि भवि सरोज रविराय ।
कञ्चन छवि कर जोर कवि नमत वीर जिन पाय ॥ १ ॥

पोमावती छन्द ।

रहो दूर अन्तर की महिमा बाहज गुण वर्णन बल कापै ।
एक हजार आठ लच्छन तन तेज कोटि रवि किरण न तापै ।
सुरपति सहस आंख अञ्जुलि सों रूपामृत पीवत नहिं धापै
तुम बिन कौन समर्थ वीर जिन जगसों काढ़ मोखमें थापै ।

श्री सिद्धों की स्तुति ।

मत्तगयन्दछन्द ।

ध्यान हुताशन में अरि ईंधन झोंक दियो रिपु रोक निवारी

शोक हरा भवि लोकन का वर केवल भान मयूख उधारी
लोक अलोक विलोक भये शिव जन्म जरामृत पंक पखारी
सिद्धनथोक वसै शिव लोक तिहीं पग धोक त्रिकाल हमारी ११
तीरथनाथ प्रणाम करें जिन के गुण वर्णन मैं बुध हारी।
मोम गयो गल मोख मझार रहा तिहिंव्योम तदाकृत धारी
जन्म गहीर नदी पति नीर गए तिर तीर भये अविकारी।
सिद्धनथोक वसे शिवलोक तिहीं पगधोक त्रिकाल हमारी।

श्रीसाधु परमेष्ठी को नमस्कार।

घनाचरी छन्द।

शीत ऋतु जोरें अङ्ग सब ही सकोरें तहां तन को न मोरें नदी धोरै धीर जे खरे। जेठ की झकोरैं जहां अण्डा चील छोरें पशु पक्षी छांह लोरें गिर कोरें तप ये धरे। घोर घन घोरैं घटा चहों ओर डोरें ज्यों ज्यों चलत हिलोरें त्यों त्यों फोरें बल ये अरे। देह नेह तोरें परमारथ से प्रीत जोरें ऐसे गुरु मेरे हम हाथ अञ्जलि करें। १३

११। भानमयूख=सूर्य की किरणें। पंक=कीचड़। व्योम=आकाश। गहीर=गहिरा। १२ तीर्थनाथ=तीर्थंकर १३ गिरकोरं=पहाड़ की चोटियां।

श्रीजिनवाणी को नमस्कार।

मत्तगयन्दछन्द।

वीर हिमाचल तैं निकसी गुरुगौतमके मुख कुण्ड ढरी है।
मोह महाचल भेद चली जग की जड़ता तप दूर करी है।
ज्ञान पयोनिधि मांहि रली बहु भङ्ग तरङ्गन तैं उछरी है।
ता शुचिशारद गङ्गनदी प्रतिमैं अञ्जुली निजशीशधरीहै १४
या जगमंदिर में अनिवार अज्ञान अंधेर छयो अति भारी।
श्रीजिनकी धुनि दीपशिखासुम जो नहीं होय प्रकाशनहारी
तौ किस भांति पदारथ पांति कहां लहते रहते अविचारी।
या विधि संत कहैं धन हैं धन हैं जिन बैन बडे उपकारी।१५

श्रीजिनवाणी और परमतवाणी अंतर दृष्टांत।

घनाक्षरीछन्द।

कैसे कर केतकी कनेर एक कहि जाय आक दूध गाय दूध अन्तर घनेरो है। पीरो होत रीरी पै न रीसकरै कंचन की कहां कागवाणी कहां कोयलकी टेर है। कहां भानतेज

१४। पयोनिधि = समुद्र।

१६। रीरी = पीतल। कंचन = सोना।

भारो कहां आगिया विचारो कहां पूनो को उजारो कहां मावस अन्धेर है। पक्ष तज पारखी निहार नैन नोके कर जैन बैन और बैन इतनो ही फेर है ॥ १६ ॥

कब गृह वास सौं उदास होय वन मेंउ वेऊ निज रूप रोकूं गतिमन करी की। रहि हौं अडोल एक आसन अचल अंगसही हौं परिषहशीत घाम मेघ झरीकी। सारंगसमाज खाज कबध्यौं खुजावे आन ध्यानदल जोर जी तूं सेना मोह अरी की। एकल विहारी यथा जात लिंग धारी कब होऊं इच्छाचारी वलहारी वाह घरी की ॥१७

राग वैराग अन्तर कथन।

घनाक्षरी छंद।

राग उदय भोग भाव लागत सुहावनेसे विना राग ऐसे लागें जैसे नाग कारे हैं। राग ही से पाग रहे तनमें सदीव जीव राग गए आवत गिलानि होत न्यारे हैं। राग ही से जग रीति झूठो सब साच जानै राग मिटै सूझत असार

१७। गति = चाल। मनकरी = मन रूपी हाथी। सारंग = हिरण। जातलिंग = नग्नवेश (दिगंबर)।

बेद मारे हैं। रागी बीतरागी के बिचार में बडो है मेद
बैसे महा पच्छ पक्ष काऊ को बघारे हैं॥ १८

भोग निषेध कथन।

मत्तगयन्द छंद।

तू नित चाहत भोग नये नर पूरब पुन्य बिना किम पैहे। कर्म संयोग मिले कहिं जोग गहे जब रोग न भोग सकै है। जो दिन चारक ब्योंत बन्यो कहिं तो फिर दुर्गति में पछतैहै है। या हित यार सलाह यही कि गई कर जाहि निबाह न ह्वै है॥ १९

देहनिरूपणकथन अर्थात् देहके निर्णय में।

मत्तगयन्द छन्द।

मात पिता रज बीरज सौं उपजी सब सात कुधातु भरी है। माखिन की पर माफिक बाहर चाम कि बेठन बेढ धरी है। नातर माय लगैं अब ही बगु बायस जीव बचै न घरी है। देह दशा यहि दीखत भ्रात घिनात नहीं किम बुद्धि हरी है॥ २०

---

१८ भर — शाच है। १ । बायस — काग

संसार दशा निरूपण वर्णन ।

घनाक्षरी छन्द ।

काउ घर पुत्र जायो काउ के वियोग आयो काउ राग रङ्ग काउ रोआ रोई करी है। जहां भान ऊगत, उछाह गीत गान देखे सांझ समय तहां थान हाय हाय परी है। ऐसी जग रीत को विलोक कै न भीत होय हा हा नरमूढ तेरी बुद्धिकौन हरी है। मानुष जनम पाय सोवत विहाना जाय खोघत करोडन की एक एक घरी है ॥ २१ ॥

सोरठाछन्द ।

कर कर जिन गुण पाठये जात अकारथ रे जिया।
आठ पहर में साठों घड़ी घनेरे मोल की ॥ २२ ॥
कानी कौडी काज किरोडन को लिख देत खत ।
ऐसे मूरखराज जग वासी जिया देखिये॥ २३ ॥

दोहाछन्द ।

कानी कौडी विषै सुख भव दुख करज अपार ।
विन दीये नहीं छूटते लेशक दाम उधार॥ २४ ॥

२१भान=सूर्य। विहाना=वृथा । २४ लेशक=थोडासा।

शिष्य उपदेश कथन।

छप्पै छन्द।

दस दिन विषै विनोद फेर बहु विपत परम्पर।
अशुच गेह यह देह नेह जानत न आप जर।
मित्र बन्धु सनबन्धि और परिजन जे अङ्गी।
अरे अन्ध सब धन्ध जान स्वारथ के संगी।
परहित अकाज अपनो न कर मूढ़राज अब समझ उर।
तज लोक लाज निज काज कर आज दाव है कहत गुरु ॥२५॥

घनाक्षरी छन्द ॥

जौलौं देहतेरी काहु रोगसों न घेरी जौलौं जरानांहि नेरी जासों पराधीन परिहै। जौलौं जम नामा बैरी देय न दमामा जौलौं मानै कान रामा बुद्धिजाय न बिगरि है। तौलौं मित्र मेरे निज कारज समार लीजे पौरुष थकेंगे फिर पाछे कहा करि है। अहो आग आये जब झोंपरी जरन लागी कूवा के खुदाये तब कौन काज सरि है ॥ २६ ॥

---

२५. परम्पर = पंक्ति। जर = जड़।

सौ वरष आयु ताका लेखा कर देखा सव, आधि तो अकारथ हि सोवत विहाय रे। आधी में अनेक रोग वालवृद्ध दशा योग और हूं संजोग केते ऐसे वीत जांय रे। वाकी अव कहा रही ताही तूं विचार सही कारज की वात यही नोको मन लायरे। खातिरमें आवे तो खलासो कर हाल नाहीं काल घाल परै है अचानक ही आयरे ॥ २७॥

वाल पने वाल रह्यो पाछै गृह काज भयो लोक लाज काज वांधो पापन को ढेर है। आपना अकाज कीनो लोकन में यश लीनो परभव विसार दीनो विषै विष जे रहे। ऐसे हि गई विहाय अलप सो रही आय नर परयाय यह अन्धे की वटेर है। आये श्वेत भईया अव काल है अवैया इम जान नर सियाने तेरे अज्ञों भी अन्धेर है ॥ २८॥

मत्तगयंद छन्द ॥

वालपने न सभाल सक्यो कछु जानत नांह हिताहित ही को यौवन वैस वसी वनिता उर कै नित राग रह्यो लछमी को यों पन दोयविगोय दिये नर डारत क्यों नरकैं निज जी को आये हैं श्वेत अज्ञों सठचेत गई सोगई अवराख रहीको ॥२९।

२८। अलप = थोड़ा। २९। वनिता = स्त्री।

चिन्तत यौं दिनजात चले यम आय अचानक देत धकाजी ।
खेलत खेल खिलार गए रह जायरूपो शतरञ्जकी वाजी ।३२
तेज तुरग सुरंग मिले रथ मत्त मतग उतंग खरे हैं ।
दास खवास अवास अटाधन जोर करोरन कोश भरे हैं ।
ऐसे भये तो कहा भयो हेनर छोड चले जब अन्त छडेही ।
धाम खरे रहि काम परे रहि दामगरेरहि ठाम धरेही ॥३३॥

अभिमान निषेध वर्णन ॥

घनाक्षरी छन्द ।

कञ्चन भण्डार भरे मोतिन के पुञ्जपरे घने लोग द्वार खरे मारग निहारते । यान चढे डोलते हि झीने स्वर बोलते हि काउको तो ओर नेक नोके न चितारते । कौलों धन खांगे तेउ कहे तो न जांगे तेउ फिरैं पाय नांगे कांगे पर पग झारते एते पै अयाना गरभाना रहा विभोपाय धृग है समझ तेउ धर्म न समारते ॥३४॥

देखो भर यौवन मैं पुत्रको वियोग भयो तैसेही निहारी

---

३२ । रुपो=खिलरी । ३३ । तुरंग=घोडे । मतग=हाथी ।
३४ । कंचन=सोना ।

निज नारी काज मरमैं। जैसे पुन्यवान जीव दीखते पे जगत
ही मैं रंकमये फिरैं तेउ क्यों हि न परमैं। ऐसे है प्रमाण। जग
अतिघसों भरे राग दोष न वैराग जागै रहौ मैं मरम मैं।
मोहवसों देख अन्ध सुख की लालसेरी परी ऐसे राजरोग को
ईलाज कहा जग मैं॥ १५॥

दोहा छन्द।

जैनवचन अञ्जनवटी आँजैं सुगुरु परवीन।
राग तिमिर तऊ न मिटै,बड़ो रोग लखलीन॥१६॥

निज व्यवहार कथन॥

घनाक्षरी छन्द।

कोई दिन बीते कोई आयुमें अचानक घटै पल पल बीते
जैसे अञ्जलि को जल है। देह नित छीन होय नैन तेज हीन
होय चीकन मलीन होय छीन होय बल है। आवै जरा मेरी
ताके अन्तक अहेरी आवै परभो नजीक जात नरभो निफल

१५। रंक—गरीब। १६। अञ्जन—सुरमा। परवीन—
चतुर। तिमिर—नेत्ररोग। १७ जरा—बुढ़ापा अन्तक—यम

है। मिलके मिलापीजन पूछत कुशल मेरी ऐसी हो दशा में मित्र काहे की कुशल है ॥ ३७ ॥

वृद्ध दशा कथन ।

मत्तगयन्द छन्द ॥

दृष्टि घटि पलटी तनकी छवि वंकभई गतिलंक नई है। रूसरही परनी धरनी अति रंक भयो परयंक लई है। कम्पतनार वहै मुख लार महामति संगत छाड़ गई है। अंग उपंग पुरान भये तिशना उर और नवीन भई है॥ ३८ ॥

घनाक्षरी छन्द ॥

रूप को न खोज रह्यो तरु ज्यों तुषार दह्यो भयो पतझर किधों रहो डार सूनी सी। कूवरी भई है कटि दूवरी भई है देह उवरी इतेक आयु सेर मांह पूनी सी। यौवन ने विदा लीनी जरा ने जुहार कीनो हीन भई सुद्ध बुद्धि सबी वात ऊनी सी। तेज घट्यो ताव घट्यो जीतव सों चाव घट्यो और सब घटे एक तिश्ना दिन दूनीसी ॥३९॥

३९। तुषार = वर्फ। कटि = कमर (लंक)।

घनाक्षरी छन्द ॥

अहो इन आपने अभाग उदय नाहिं जानी वीतराग वानी सार दया रस भीनी है। जौबन के जोर थिर जंगम अनेक जीव जानजे सताये कछू करुणा न कीनी है। तेई अब जीव राश आये परलोक पास लेंगे बैर देंगे दुख भई ना नवीनी है। उनही के भयको भरोसा जान कांपत है याही डर डोकराने लाठी हाथ लीनी है ॥ ५० ॥

जाको इन्द्र चाहैं अहमिन्द्र से उमाहैं जासों जीव मुक्ति मांहि जाय भौमल बहावै है। ऐसो नर जन्म पाय विषै विष खाय जैसे कांच सांटै मूढ़ मानक गमावै है। माया नदी बूड़ भीजा काया बल तेज छीजा आयापन तीजा अब कहा बन आवै है। तातैं निज सीस ढोलैं नीचे नैन कीये डोलैं कहा बढ़ बोलैं वृद्ध बदन दुरावै है ॥ ५१ ॥

मत्तगयन्द छन्द ॥

देखहु जोर जरा भटको जमराज महीपति के अगवानी।
उज्जल केश निशान धरे बहुरोगनकी संग फौज पलानी।

---

५० । करुणा — दया । ५१ जरा भट — बुढ़ापा रूप सुभट

काय पुरी तज भाग चलो जिस आवत योवन भूप गुमानो।
लूटलई नगरी सगरी दिन दोयमखोयहिनाम निशानो ॥४२॥

दोहा छन्द ॥

सुमति छोर यौवन समें सेवत विषै विकार।
खल सांटे नहिं खोइये जन्म जवाहर सार ॥ ४३ ॥

कर्तव्य शिक्षा कथन ॥

--(घनाक्षरी छन्द)--

देव गुरु साचे मान साचो धर्म हिये आन साचोहि वखान सुन सांचे पन्थ आवरे। जोवन की दया पाल झूठ तज चोरी टाल देख न विरानीवाल तिशना घटावरे। अपनी वडाई पर निन्दा मत करै भाई यही चतुराई मद मास को वचाव रे। साध पट कर्म साधु संगत में वैठ जीव जो है धर्म साधन को तेरे चित चाव रे ॥ ४४ ॥

साचो देव सोई जा में दोप को न लेश कोई वाहि गुरु साचै उर काउ की न चाह है। सही धर्म वही जहां करुणा प्रधान कही ग्रन्थतेंई आदि अन्त एकसो निवाह है। यही जग रत्न चार इनही को परख यार साचे लेउ झूठे डार नरभौ

का कहा है। मानुष विवेक बिना पशु की समान गिना तातैं यही ठीक बात पारनी सलाह है ॥ ४५ ॥

देव लक्षण मत विरोध निराकरण।

छप्पै छन्द ॥

जो जग वस्तु समस्त हस्त तल जेम निहारैं।
जग जन को संसार सिन्धु के पार उतारैं।
आदि अन्त अविरोध वचन सबको सुखदानी।
गुण अनन्त जिस मांहि रोषकी नाहीं निशानी।
माधो महेश ब्रह्मा किधौं वर्धमान के बौद्ध यह।
ये चिन्ह जान जाके चरण नमो नमो मुझ देव वह ॥ ४६

यज्ञ विषे जीव होम निषेध ॥

घनाक्षरी छन्द ॥

कहैं पशु दीन सुन यज्ञ के करैया मोहि होमत हुताशन में कौनसी बड़ाई है। स्वर्ग सुख मैं न चहूं देउ मुझे यों न कहूं घास खाय रहूं मेरे यही मन भाई है। जो तू यही जानत है वेद यों बखानत है यज्ञ जला जीव पावै स्वर्ग सुखदाई है।

४६। माधो = विष्णु। ४७। हुताशन = आग।

डारै क्यों न वीर जामे अपने कुटम्ब ही को मोहे क्यों जारै जगत ईश को दुहाई है ॥ ४७ ॥

सातोंवार गर्भित कर्म उपदेश।

छप्पै छन्द ॥

अघ अन्धेर आदित्य नित्य सिज्झाय करीज ।
सोमायम ससार ताप हर तप कर लीज।
जिनवर पूजा नेम करो नित मगल दायन।
वुध सयम आदिरो धरो चित श्रीगुरु पायन ।
निजवित समान अभिमान विन शुक्र सुपात्र हि दानकर।
यों सुनि सुधर्म पट कर्म भण नरभो लाहा लेउ नर ॥४८॥

॥ दोहा छन्द ॥

येही छह विधि छैः कर्म सात विसन तज वीर।
इस ही पैंडे पहुचिये क्रमक्रम भवजल तीर ॥ ४९ ॥

सप्त व्यसन कथन ॥

जूवा खेलन१ मांस२ मद३ वेश्या विसन४ शिकार ५।
चोरी६ पर रमणी रमण७ सातों पाप निवार ॥ ५० ॥

---

५० । पर रमणी=पर स्त्री ।

जूवा निषेध कथन ॥

छप्पै छन्द ।

सकल पाप संकेत आपदा हेत कुलच्छन ।
कलह खेत दारिद्र देत दीसत निज अच्छन ।
गुण समेत यश सेत केत रवि रोकत जैसे ।
औगणन का केत लेत लख बुधजन ऐसे ।
जूवा समान इस लोक में और अनीत न पेखिये ।
इस विसन रायके खलको कौतुक हूं नहिं देखिये ॥११॥

मांस निषेध कथन ॥

छप्पै छन्द ॥

जंगम जी को नाश होय तब मांस कहावै ।
सपरस आकृत नाम गन्ध उर घिन उपजावै ।
नरक योग निरदई खांहि नर नीच अधरमी ।
नाम लेत तज देत असन उत्तम कुल करमी ।

---

११ । खल — खेलक । कहाय — कहावैं ।

यह अशुच मूल सबतें बुरो कृमकुल रास निवास नित।
आमिष अभक्ष इसको सदा वरजो दोष दयाल चित॥५२।

मदिरा निषेध कथन॥

दुमिला छन्द।

कृम रास कुवास सुरापद है शुचिता सब छूवत जात सही॥
जिसपान किये सुधि जाय हिये जननी जनजानत नार यही।
मदरा सम और निषेध कहा यहजानभले कुलमें न गही।
धिकहै उनको वह जीवजलो जिन मूढनके मतलीन कही॥५३

वेश्या निषेध कथन॥

दुमिला छन्द॥

धनकारण पापनि प्रीत करै नहि तोरत नेह यथा तिनको।
लब चाखत नीचन के मुखकी शुचिता सब जाय छुये जिनको
मद मांस बजारनि खाय सदा अन्धले विसनी न करैं घिनको॥
गणिका संग जे शठ लीन भये धृक है धृक है धृक है तिनको।

५२। अशुच = अशुद्धि। आमिष = मास।
५४। गणिका = वेश्या।

आखेट (शिकार) निषेध कथन ।

घनाक्षरी छन्द ।

कानन में बसें ऐसे आनन गरीब जीव प्रानन सों प्यार प्रान पून्जी जिस पास है । कायर सुभाव धरें न काहूसों द्रोह करें सब ही सों डरें दांत लिये तृण रहें हैं । काहू से न रोष पुनि काहू पै न पोष चाहें काउके परोष पर दोष नाहिं धरें हैं । नेक स्वाद सार वे को ऐसा मृग मारवेको हाय हाय रे कठोर तेरो कैसे कर चले हैं ॥ ५५॥

चोरी निषेध कथन ।

छप्पैछन्द ।

चिन्तातजै न चोर रहत चौंकायत सारै ।
पीटैं धनी विलोक लोक निर्दई मिल मारै ।
प्रजापाल कर कोप तोप पर रोप उड़ावै ।
मरै महादुख पेख अन्तनीची गति पावै ।
अदु विपत मूल चोरी विसन प्रगट त्रास आवै नजर ।
परवित अदत्त अङ्गार गिन नीत निपुन परसै न कर ॥५६॥

५६। कर = हाथ।

परस्त्री निषेध कथन।

छप्पैछन्द।

कुगति वहन गुण दहन दहन दावानलसी है।
सुयश चन्द्र घन घटा देह कृश करन छई है।
धनसर सोखन धूप धरम दिन सांझ समानो
विपत भुजङ्ग निवास वांबई वेद वखानो।
यहि विध अनेक औगुण भरी प्रान हरन फांसी प्रवल।
मत करहु मित्र यह जानकर पर वनता सो प्रीत पल॥५७

स्त्री त्याग प्रशंसा कथन।

दुमिलाछन्द।

दिव दीपक लोय वनी वनता जढ़ जीव पतङ्ग जहां परते।
दुख पावत प्राण गमावत हैं वरजे न रहैं हठ सों जरते।
इसभांति विचक्षण अंखयनके वस होय अनीत नहीं करते।
परतीय लख जे धरती निरखें धन हैं धन हैं धन हैं नर ते ५८
दृढशील शिरोमणि कारजमें जगमें यश आरज तेहि लहै
तिनके युग लोचन वारिज हैं इस भांत अचारज आप कहै।

५७। दहन = आग। ५८ वारिज = कमल

पर कामिनि को मुखचन्द्र चितैं मुंद जांय सदा यह टेव गहैं।
धन जीवन है तिन जीवनको धनि है अघमोचन मोख लहैं॥५९

कुशील निन्दा कथन।

मत्तगयन्द छंद।

जे परनारि निहारि निलज्ज हँसैं विगसैं बुधहीन बड़ेरे।
जूठन की जिम पातर पेखि खुशी उर कूकर होत घनेरे।
है जिनकी यह टेव सदा तिनको इस भौ अपकीरति हेरे।
है परलोक विषै दृढ़ दंड करै शतखंड सुखाचल केरे॥६०

जो एक एक व्यसन सेवन सों नष्ट भये तिनके नाम।

छप्पैछन्द।

प्रथम पांडवा भूप खेलि जूआ सब खोयो।
मांस खाय बकराय पाय विपदा बहु रोयो।
बिन जाने मदपान योग जादौगन दज्झे।
चारुदत्त दुख सह्यो वेसवा विसन अरुज्झे।
नृप ब्रह्मदत्त आखेटसों द्विज शिवभूति अदत्तरति।
पररमनि राचि रावन गयो सातों सेवत कौन गति॥६१॥

६१। पररमनी — पर स्त्री (सीता)।

दोहा छन्द ।

पाप नाम नरपति करै नरक नगर मैं राज ।
तिन पठये पायक विसन निज पुरवसतीकाज ॥६२॥
जिनकै जिनवर वचनकी वसी हिये परतीत ।
विसन प्रीत ते नर तजो नरक वास भयभीत ॥६३॥

कुकवि निन्दा कथन ।

मत्तगयन्द छंद ।

राग उदय जग अन्धभयो सहजै सब लोकन लाज गमाई ।
सीख विना नर सीख रहा वनिता सुख सेवन की चतुराई ।
तापर और रचैं रस काव्य कहा कहिये तिनकी निठुराई ।
अन्ध असूझन को अखिया मध मेलत हैं रज राम दुहाई ॥६४॥
कञ्चन कुम्भन की उपमा कहि देत उरोजन को कविवारे ।
ऊपर श्याम विलोकत कै मणि नीलमकी ढकनी ढकछारे ।
यों सत वैन कहै न कुपण्डित ये युग आमिष पिण्ड उघारे ।
साधन डारदई मुहछार भए इसहेत किधों कुम्नकारे ॥६५॥

---

६५ । कंचनकुम्भ = सोने के कलश । ६७ मतग = हाथी ।

विधातासों तर्क कर कुकवि निन्दा कथन।

मत्तगयन्द छन्द।

हे विधि भूल भई तुमतें समझे न कहां कसतूरी बनाई।
दीन कुरङ्गन के तनमें तिन दन्त धरै करुणा नहिं आई।
क्यों न करी तिन जीभन जे रस काव्य करैं पर कौ दुखदाई
साधु अनुग्रह दुर्जन दण्ड दुहू सधते विसरी चतुराई॥११॥

मनरूप हस्ती वर्णन।

छप्पै छन्द।

ज्ञान महावत डार सुमति सांकल गहि खण्डै।
गुरु अंकुश नहिं गिनै ब्रह्म व्रत वृक्ष विहण्डै॥
कर सिद्धान्त सर न्हौन केलि अघरज सौं ठानै।
करण चपलता धरै कुमति करणी रति मानै॥
डोलत सुछन्द मदमत्त अति गुणपथिक आवत डरै।
वैराग्य खम्भ न बांध नर मन मतङ्ग विचरत बुरे॥१२॥

गुरु उपकार कथन।

घनाक्षरी छन्द।

ढाईसी सराय काय पांथि जीव बस्यो आय रात जय

निध जापै मोक्ष जाको घर है। मिथ्या निशकारी जहां मोह अन्धकार भारी कामादिक तसकर समुहन को थर है। सोवे जो अचेत सोई खोवै निज सम्पदा को तहां गुरु पाहरू पुकारैं दया कर है। गाफिल न हूजे भ्रात ऐसी ही अन्धेरी रात जागरे बटेऊ जहां चोरनको डर है ॥६८॥

चारों कषाय जीतन उपाय कथन।

मत्तगयन्द छन्द।

छेम निवास छिमाधुवनी विन क्रोध पिशाच डरै न टरैगो।
कोमल भाव उपाय विना यह मान महामद कौन हरैगो।
आर्जव सार कुठार विना छल बेल निकन्दन कौन करैगो।
संतोष शिरोमणिमन्त्र पढेविन लोभफणी विप क्यों उतरैगो६९

मिष्टवचन बोलन उपदेश।

मत्तगयन्दछन्द॥

कांहेको बोलत बोल बुरे नर नाहक क्यों यशधर्म गमावै॥
कोमल बैन चवै किन ऐन लगै कछु है न सबै मन भावै।

६८। तसकर=चोर। ६९। फणी=साप।

ताहू छिरै रसना न बिधै न घटै कुछ मद्द दरीद्र न आवै।
कीच कहै खिया हान नहीं तुम को सुनजीवनको सुखपावैगे॥७०॥

धैर्यधारण शिक्षा वर्णन ।

घनाक्षरी छन्द ।

आयो है अचानक भयानक असाता कर्म ताके दूर करवेको बली कोउ है रे। जउ मम माये तैं कमाये पुन्यपाप आप तेई अब आय मिळ सबै काल सहरे। अरे मेरे धीर काप होत है मधीर पामे कायको न सीर तू अकेलो आप सहरे। मर्दै दलगीर कुछ पोर न बिगड़ आव याहीतैं सयाने तू तमाशा-गीर रहर॥७१॥

होनहार दुर्निवार कथन ।

घनाक्षरी छंद ।

कैसेकैस बली भूप भूपर विख्यात भये बैरी कुछ कांपे नेक मोंहों के पिचार सों। संघेगिर सायर दिवायर से दिपैं जिन

७०। रसना — जिव्हा — जीभ। ७१। धीर — धीरज।
७२। सायर — सागर। दिवायर — दिवाकर (सूर्य)।

कायर किये हैं भट किरोड़न हुंकार सों। ऐसे महामानी मौत आये हूं न हार मानी उतरे न नेक कभी मानके पहार सों। देव सो न हारे पुनि दाने सों नहारे और काऊ सों न हारे एक हारे होम हार सों ॥ ७२ ॥

कालसामर्थ कथन।

घनाक्षरी छन्द।

लोहमई कोट कई कोटन की ओट करो कांगरन तोप रोप राखो पट भेरके ॥ चारोंदिश चेरागण चौकस होय चौकी दे चहू रङ्ग सेना चहों ओर रहो घेरके ॥ तहां एक भोहरा बनाय बीच बैठो पुनि बोलोमत कोउ जो बुलावै नाम टेर के। ऐसो परपञ्च पांति रचो क्यों न भांति भांति कैसे हूं न छोड़ै हम देखो यम हेर कै ॥ ७३ ॥

अज्ञानी जीव दुखी हैं ऐसा कथन।

मत्तगयन्द छन्द।

अन्तक सों न छुटै निश्चैपर मूरख जीव निरन्तर धूजे।

७३। चहुरंग = चतुरंग = हाथी, घोडे, रथ, पयादे। चमू = फौज। ७४। अन्तक = यम (काल)।

चाहत है चित में नित ही सुख होय न लाभ मनोरथ पूजै।
तू पर मन्दमति जगमें भाई आस बंध्यो दुख पावक मूंजै।
छोड़ विचक्षण ये जड़ लक्षण धीरजधार सुखी क्यों न हूजै॥७

धैर्यधारण शिक्षा वर्णन।

मत्तगयन्द छन्द।

ओमन साम सभाव लिख्यो प्रभु धीरज सुकृतके अनुसारे।
सोह मिलै कुछ फेर नहीं मरुदेश कि हेर सुमेर सिधारे।
कूप कियौं मर सागर म भर गागर मान मिलैजल सारे।
पातक बाप कहीं नहिं हाय कहा करिये भवसोच बिचारे॥७

आशानाम नदी वर्णन।

घनाक्षरी छन्द।

माह ने महान ऊंच पर्वत स ढर आई तिहुं जग भूतल को पाव बिसतरी है। बिबिध मनोरथ में भूरि जल भरी बहु तिशना तरङ्गन सौं आकुलता धरी है। परे भ्रमभंवर जहां राग स मगर तहां चिंता तट तुङ्ग धुस धम बाप हरी है।

ऐसी यह आशा नाम नदी है अगाध महा धन्य साधु धीर
धर तरणी चढ़ तरी है ॥ ७६ ॥

महामूढ़ वर्णन ।

-:(घनाक्षरी छन्द):-

जीवन कितेक तामें कहा बीत बाकी रह्यो तापै अन्ध
कौन कौन करै हेर फेर ही। आप को चतुर जानै औरन को
मूढ़ मानै सांझ होन आई है विचारत सवेर ही। चाम ही के
चक्षुन सौं चितवै सकल चाल उर सौं न चितवै कर गारो है
अन्धेर ही। बाहे बान तानकैं अचानक ही ऐसो यम दीसे है
मसान थान हाडन को ढेर ही। ७७।

१ २ ३ ४ ५ ६
केती बार स्वान सिंह सावर सियाल सांप सिन्धुर
७ ८ ९ १० ११ १२
सारङ्ग सूसा सूरी उदर परो। केती बार चील चमगादर चकोर
१३ १४ १५ १६ १७
चिरा चक्रवाक चातक चण्डूल तन भी धरो। केती बार कच्छ
१८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५
मच्छ मेंडक गिंडोला मीन शङ्ख सीप कौडी हो जलूका जल में

७६। तरणी = बेडी।

७७ चक्षु = आंख। ७८ सिन्धुर = हाथी। चक्रवाक = चकवा

तिरी। कोई कह आप रे किसावर सो बुरो मानै यों न मूढ़ आं
मैं अनेक बार ही मरो।७८।

दुष्ट जन वर्णन॥

छप्पै छन्द॥

कर गुण अमृत पान दोष विष विषम समप्पै।
वक्र चलन नहिं तजै युगल जिह्वा मुख थप्पै।
तकै निरन्तर छिद्र उदैपर दीपन रूप्पै।
बिन कारण दुख करै रविश कबहुं नहिं मुप्पै।
वर मौनमन्त्रसौं होय वश संगत कीये हान है।
बहु मिलत बान पावै सही दुर्जनसांप समान है॥७९॥

विधातासौं वितर्क कथन।

घनाक्षरी छन्द।

सज्जन जार कीनो सुन्दर रस सों कौन काज दुष्ट जीव
किया कालकूटसों कहा रही। दाता निरमापे फिर थापे क्यों
कलप वृक्ष याचक विचारे लघु तृण हू तैं हैं सही। इष्ट के
संयोग तैं न सीरो घन सार कुछ जगत को ख्याल इन्द्र जाल

७८। कंठ—ठेठी। ८ । काम मूढ़—बधिर

र्म है सही। ऐसी दोय वात दीखें विध एक ही सो तुम
काय को बनाई मेरे धोको मन है यही ॥ ८० ॥

चौबीस तीर्थंकरों के चिह्न वर्णन।

छप्पैछन्द।

१ २ ३ ४
गऊपुत्र गजराज वाजि वानर मन मोहै।
५ ६ ७ ८ ९
कोक कमल सांथिया सोम सफरीपति सोहै।
१० ११ १२ १३ १४
श्रीतरु गैंडा महिष कोल पुन सेही जानों।
१५ १६ १७ १८ १९ २०
वज्र हिरन अज मीन कलश कच्छप उर मानों।
२१ २२ २३ २४
शतपत्र शङ्ख अहिराज हरि ऋषभदेव जिन आदि ले।
श्रीवर्द्धमान लों जानिये चिन्ह चारु चौवीस ये। ८१।

श्रीऋषभदेवजीके पूर्वभव कथन।

घनाक्षरीछन्द।

१ २
आदि जैवरमा दूजै महावल भूप तीजै स्वर्ग ईशान

८१। वाजि = घोडा। सफरी पति = मच्छ। कोक = चकवा।
अज = बकरा। शतपत्र = कमल। अहि = साप। हरि = सिंह

ललितांग देव भयो है। चौथे वज्रजंघ राय पांचवें भुगल देह सम्यक ले दूजे देवलोक फिर गयो है। सातवें सुबुधि देव आठवें अच्युतइन्द्र नोमें मा नरिन्द्र वज्र नाभिनाम भयो है। दशमें अहेमिन्द्र जान ग्यारमें सर्वारथसिद्ध नाभि वंश भूधर के माथे जन्म लिया है।

श्रीचन्द्रप्रभुस्वामी के पूर्वभव कथन

गीता छन्द

श्रीवर्म भूपति पाल पहमो स्वर्ग पहले सुरभयो।
पुनि अजितसेन छखण्ड नायक, इन्द्र अच्युत में थयो।
वर पद्मनाभि नरेश निर्जर वैजयन्त विमानमें।
चन्द्र प्रभस्वामी सातवेंभव भये पुरुषपुराणमें॥ ८१॥

श्रीशान्तिनाथ स्वामाके पूर्व भव कथन।

सवैया इकतीसा।

सिरीसेन आरज पुनि स्वर्गी अमित तेज खचर पद पाय। -

८१। पर्याय — देह का बदलना॥

सुर रवि चूल[५] स्वर्ग आनत में अपराजित[६] वलभद्र कहाय।
अच्युत इन्द्र[७] वज्रायुध चक्री[८] फिर अहमिन्द्र[९] मेघरथ राय[१०]
सरवारथ सिद्धेश[११] शान्त जिन[१२] ये प्रभुकी वारह पर्याय॥८४॥

श्री नेमिनाथ जीके भव वर्णन ॥

छप्पै छन्द

पहिले भववन भील दुतिय अभिकेतु सेठघर। तीजै सुर सौधर्म्म चौम चिन्ता गति नभ चर। पंचम चौथे स्वर्ग छठै अपराजित राजा। अच्युत इन्द्र सातवें अमर कुल तिलक विराजा। सुप्रतिष्ट राय आठम नवें जन्म जयन्त विमान धर। फिर भये नेमि हरिवंश शशि ये दश भव सुधि करहु नर ॥८५॥

श्रीपार्श्वनाथ जी के भवान्तर नाम।

सवैया इकतीसा।

विप्र पूत मरू भूत विचक्षण वज्र घोप गज गहन मंझार।

८५। भव = जन्म।

सुरपुनिसहसरश्मि विद्याधर अच्युत स्वर्ग अमरी भरतार।
मनुज इन्द्र मध्यम ग्रैवेयक राजपुत्र आनंद कुमार।
आनतेन्द्र पद में भय जिनवर भये पार्श्व प्रभु के अवतार॥८६॥

राजा यशोधर के भवों का कथन।

मत्तगयन्द छन्द।

राय यशोधर चन्द्रमती पहिले भव मण्डल मोर कहावे।
स्याहक सर्प नक्रो मच्छमच्छ अजाअज भैंस अजा फिर आवे।
फेर भये कुकड़ा कुकड़ी इस सात भवान्तर में दुख पावे।
चून मईचरणायुध मारकथा सुन सन्त हिये धरलावे॥ ८७॥

सुबुद्धि सखी प्रति वचनोत्तर।

घनाक्षरी छन्द।

कहै एक सखी स्यानी सुनरी सुबुद्धि रानी तेरो पति दुखी देख लागे उर आर है। महा अपराधी एक पुग्गल है छहों माहिं सोई दुख देत दीखे नाना परकार है। कहत सुबुध आली कहा दोष पुग्गल को अपनीहि भूल लाल होत आप

८७। अजा — बकरी। अज — बकरा॥

स्वार है। खोटोदाम आपनो सराफै कहा लौ वीर काऊको न दोष मेरो भौंदू भरतार है॥ ८८॥

गुजराती भाषा में शिक्षा।

कडकाछन्द।

ज्ञानमय रूप रूडो वनो जेह न लखे क्यों न रे सुख पिण्ड भोला। वेगली देहथी नेह तोरूं करै पहनी टेव जो मेह वोला भेरनै मानभव दुक्ख पाम्या पछै चैन लाधो नथी एकतोला चलो दुख वृक्षन वीज वोवै तुमैं आपथी आपनै आप वोला

द्रव्यलिङ्गी मुनि निरूपण कथन।

मत्तगयन्द छन्द।

शीत सहैं तन धूप दहैं तरु हेट रहैं करुणा उर आनैं।
झूठ कहैं न अदत्त गहैं वनता न चहैं लछि लोभ न जानैं।
मौन वहैं पढ भेद लहैं नहि नेम जहैं व्रत रीत पिछानैं।
यों निवहैं परमोखनहीं विन ज्ञान यहैं जिनवीर वखानैं।९०

---

८८ भौंदू=महामूढ। ९० लछि=लक्ष्मी।

अनुभव प्रशंसा कथन।

घनाक्षरी छन्द।

जीवन अलप आयु बुद्धि बल हीनता में आगम अगाध सिन्धु कैसे ताहि डाक है। द्वादशांगमूलएकअनुभौअपूरबकला भवदाघहारी घनसार की सलाक है। यही एक सीख लीजै याही को अभ्यास कीजै याही रस पीजै ऐसो वीर जिन वाक है। इतनों ही सार यही आतमको हितकार यहीं लौं मदार फिर आगे दूकढाक है ॥ ९१ ॥

श्री भगवानसों विनती।

घनाक्षरी छन्द।

आगम अभ्यास होव सेवा सरवज्ञ तेरी संगत सदीव मिलो साधरमी जनकी। सन्तन के गुनको बखान यह बान परै मेटोटव देव पर औगुन कथन की। सब ही सौं ऐनसुख दैन मुख बैन भाखो भावना त्रिकाल राखो आतमीक धनकी जौलों कर्मकाटखोलूं मोक्ष के कपाट तोलूं यही बातहूजो प्रभु पूजो आस मनकी ॥ ९२ ॥

९१। अलप=थोडा। आगम=शास्त्र। ९२ कपाट=किवाड़ दरवाजा॥

जैनमत प्रशंसा कथन।

दोहा छन्द।

छपे अनादि अज्ञानतें जग जीवन के नैन।
सब मत मूठी धूलकी अञ्जन जगमैं जैन ॥ ९३ ॥
भूल नदी के तिरनको और जतन कछु है न।
सब मत घाट कुघाट है राजघाट है जैन ॥ ९४ ॥
तीन भवन में भर रहे थावर जङ्गमजीव।
सब मतभक्षक देखिये रक्षक जैन सदीव ॥ ९५ ।
इस अपार भवजलधि मे नहिंनहिं और इलाज।
पाहन वाहन धर्मसब जिनवरधर्म जिहाज ॥ ९६ ॥
मिथ्या मत के मदछिके सब मत वाले लोय।
सब मत वाले जानिये जिनमत मत्त न होय ॥ ९७ ॥
मत्त गुमान गिर पर चढे बडे भये जग माह।
लघु देखें सब लोक को क्या ही उतरत नांह ॥ ९८ ॥
चाम चक्षुसों सब मती चितवत करत न वेर।
ज्ञान नैनसों जैन ही जोवत इतनो फेर ॥ ९९ ॥

---

१०१ शिव सरवर = मोचरूप सरोवर ।

के सुवश धर्मरागीनर तिनके कहेसै जोड़कीनो एक ठानै है फिर फिर प्रेरै मेरे आलसको अन्तभयो जिनकी सहाय यह मेरे मन मानै है ॥ १०६ ॥

सतरहसै इक्यासिया पोह पाख तम लीन ।
तिथ तेरस रविवार को शतक सपूरणकीन ॥ १०७

इति श्रीभूधरजैनशतक सम्पूर्णम् ।

कर्त्ता खंडन का फोटो।

लावनी

अर्थात्—वह लेख कि जिस में यह सिद्ध किया है कि ईश्वर सृष्टि का कर्ता हर्ता नहीं है, जिस को जिनधर्म्म सेवक ज्योतिप्रसाद प०जे० सुपुत्र लाला नत्थूमल जैनी मुहल्ला चाहपारश देववन्द निवासी ने वनाया, और उन की आज्ञानुसार उमेदसिंह मुसद्दीलाल अमृतसर निवासी ने छपवाया ॥

सूचना।

सेवक को वहुत वड़ा विचार है कि इस लेख को पढ़ कर वहुत से भ्रातृगण मुझे अप्रमाण दूपित ठहरावेंगे परंतु जो वह भाई न्याय दृष्टि से पक्षपात रहित होकर विचार वान होय पढेंगे तो अवश्य है कि वह सत्य भेद पाकर

अत्यन्त आनन्दित होंगे इस कारण सर्व पुरुषों से प्रार्थना है कि इस लेख को न्याय पूर्वक ध्यान सहित पढ़ें और सुनें जिस से सत्या सत्य का निर्णय हो ॥

लावनी ।

कर्तावादी कहैं जीवका कर्ता हर्ता परमेश्वर ।
सृष्टी को रच जीव बनाय इसमें सन्देह पड़े नजर ।
अगर रची सृष्टी ईश्वरने फिर क्यों अंतर दिखाई खास ॥
एक सुखी एक दुखी बनाया एक धनी निर्धन कंगाल ॥
ऊंच नीच क्यों पुरुष बनाये एक दयालु एक चंडाल ।
सब जीवोंपर समदृष्टी क्यों रहा न इसका कहीये हाल ॥
अगर कहोगे अपने मन की वह रखता हरदम खुशहाल ।
करें बुराई जो ईश्वर को उसे देत दुख अति विकराल ॥
ता खुशामदी हुआ ईश्वर बड़ा दोष यह करिये ख्याल ।
अगर कहो अनुसार कर्म के देता है सुख दुख फल माल ॥
तबतो यह बतलाओ जीव के संग कर्म लगे क्योंकर ।
कर्तावादी कहैं जीवका कर्ता हर्ता परमेश्वर ॥ १ ॥
जब ईश्वर ने प्रथम जीव को पैदा किया जगत के माह ।
तब तब कर्म जीव के संगमें लगे हुवे थे या कि नाह ॥

अगर कहोगे कर्म संग थे यह तो बात हुई बे राह।
किये कर्म बिन कर्म कहां से आय जीव को किया तबाह॥
अगर कहोगे कर्म नहीं थे सग जीव के जन्मत यार।
फिर यह आये कर्म कहां से इसका बतलाओ विस्तार॥
किये कर्म क्यों पैदा ईशने करें जीव को जो लाचार।
कर्म जीव पर करा ईशने क्यों सुख दुख यह दीना डार॥
झूठ बात यह हुई सरासर मनमें समझो जरा चतुर।
कर्ता वादी कहैं जीवका कर्ता हर्ता परमेश्वर॥ २॥
अगर कर्म अनुसार ईशसे दंड सभी पाता संसार।
तबतो दंड लहा गनिका ने करै भोग फैला व्यभिचार॥
जिसके कारन प्रगट रहा दिख भ्रष्ट हुये जगमें नर नार।
अगर कहो स्वाधीनपने से करती है गनिका यह कार॥
फिर कहते सर्वज्ञ ईशको तीन काल की जाने बात॥
तब क्यों रची देह गनिकाकी जब उसको था इतना ज्ञात।
हो करके स्वाधीन यह गनिका भ्रष्टाचार करें जग बीच॥
तब तो दोष हुआ ईश्वरको किया जान यह करतब नीच।
ईश्वर के सर्वज्ञ पने में लगें दोष अरु सुनो ज़िकर।
कर्तावादी कहैं जीवका कर्ता हर्ता परमेश्वर॥ ३॥
दुष्ट लोग जीवों को मारें वे रहमी से हरते प्राण।

किये ईश्वर ने क्यों पैदा जब उसको था इतना ज्ञान ॥
अगर कहोगे पाती द्वारा दंड खुद हैं जीव मजान।
आज्ञा से ईश्वर की अपने करतब का फल भोगन आन।—
जब घातक ने ईश्वर की आज्ञा से कीना जीव संहार ॥
फिर क्यों उसको दोष लगावें पापी दुष्ट कहैं संसार।
जैसे किसी धनी घर चोरी करी चोर धन लिया अपार॥
धनी पुरुष के कर्म योग से करवाई चोरी करतार।
दंड मिला निरदोष चोर को था ईश्वर का दोष मगर।
कर्त्ता वादी कहैं जीव का कर्त्ता हर्त्ता परमेश्वर ॥ ४ ॥
अगर कहोगे पापी नर का है अपराध बात ली मान।
फिर क्यों पैदा किये इसने पापी जन चण्डाल महान॥
अगर जान कर इन्हें बनाये तब ईश्वर चंडाल समान।
अगर किये बिन जाने पैदा तब तो है मूरख नादान॥
हुआ गम्य सर्वज्ञ पना अब रक्षक पन पर करिये गौर।
जब करता है जगका रक्षा तब क्यों कीने इन अब चोर
अगर कहोगे ज्ञान पाप का यही किया चोरी के तौर।
फिर क्यों पहरेदार बनाये फिरैं जगाते कर २ शोर॥
तब तो दगा बाज है ईश्वर जब करता यह कपट मकर।—
कर्त्ता वादी कहैं जीव का परमेश्वर ॥ ५ ॥

और यह भी कहते हो ईश्वर सब के घट में रहा है व्याप
जब ईश्वर घट २ का वासी फिर तो आप करें पुन पाप ॥
आपही ईश्वर पाप करै है जग जीवोंको दे सताप।
यह अन्याय है प्रगट नीति से इसको तो मानोगे आप ॥
और दूसरे जब घट २ में ईश्वर का प्रकाश निवास।

फिर स्वाधीन जीव ही कैसे हरदम रहै ईश जब पास ॥
सच अरु झूठ कपट छल जग मे पाप पुन्य जितने व्यवहार
सभी कराता है परमेश्वर जीव करै होकर लाचार।
करै ईश्वर भरै जीव दुख यह ईश्वर में बडी कसर।
कर्ता वादी कहैं जीव का कर्ता हर्ता परमेश्वर ॥ ६ ॥

घट २ व्यापी जब परमेश्वर तब मेरे घट वास जरुर।
मगर ईश के करता पन का मैं खण्डन करता भरपूर ॥
तवतो अपना खुद खण्डन वह करै मेरा नहीं जरा कसूर
अगर मेरा अपराध कहो तब रहै नहीं ईश्वर का नूर।

फिर कहते हो निरकार वह जिसका नहीं कोई आकार।
मगर विना आकार रचै क्या वस्तु दिल में करो विचार ॥
अंग हीन नर क्या कर सक्ता हाथ पैर विन जब लाचार।
है अचरज की बात विना आकार रचै ईश्वर संसार ॥

और यह भी कहते हो ईश्वर सब के घट में रहा है व्याप
जब ईश्वर घट २ का वासी फिर तो आप करै पुन पाप ॥
आपही ईश्वर पाप करै है जग जीवोंको दे संताप।
यह अन्याय है प्रगट नीति से इसको तो मानोगे आप ॥
और दूसरे जब घट २ में ईश्वर का प्रकाश निवास।

फिर स्वाधीन जीव ही कैसे हरदम रहै ईश जब पास ॥
सच अरु झूठ कपट छल जग में पाप पुन्य जितने व्यवहार
सभी कराता है परमेश्वर जीव करै होकर लाचार।
करै ईश्वर भरै जीव दुख यह ईश्वर में बडी कसर।
कर्ता वादी कहै जीव का कर्ता हर्ता परमेश्वर ॥ ६ ॥

घट २ व्यापी जब परमेश्वर तब मेरे घट वास जरूर।
मगर ईश के करता पन का मैं खण्डन करता भरपूर ॥
तबतो अपना खुद खण्डन वह करै मेरा नहीं जरा कसूर
अगर मेरा अपराध कहो तब रहै नहीं ईश्वर का नूर।

फिर कहते हो निराकार वह जिसका नहीं कोई आकार।
मगर बिना आकार रचै क्या वस्तु दिल में करो विचार ॥
अंग हीन नर क्या कर सक्ता हाथ पैर बिन जब लाचार।
है अचरज की बात बिना आकार रचै ईश्वर संसार ॥

ऐसी झूठ बात को माने नहीं कोइ भी ज्ञानी नर।
कर्त्ता वादी कहैं जीव का कर्त्ता हर्त्ता परमेश्वर ॥ ७ ॥
फिर कहते हो परमेश्वरको ज्योतीस्वरूप सदा सुखकार।
निरंकार पन नष्ट होगया जब उसका है रूप आकार ॥
सर्व शक्ति नहीं रहो ईश में जब सब जीव हुये स्वाधीन।
सर्व ज्ञान नहीं रहा ईश में नहीं दयालु करी यकीन॥
नहीं रहा घट २ का व्यापी समदृष्टी भी रहा न ईश।
रक्षक पन नहीं करा ईश न निर्विकार भी नहि जगदीश॥
औ २ गुन तुम वर्णन करते कर्त्ता पन में रहैं न एक।
नहीं ओप का कर्त्ता ईश्वर ज्ञानो लोगो करो विवेक॥
ईश्वर होता है महा दोषी उसको कर्त्ता कहो अगर।
कर्त्ता वादी कहैं जीवका कर्त्ता हर्त्ता परमेश्वर ॥ ८ ॥
एक बात का म र गुमाजन जरा गवास से करियो बयास
ईश्वर न रच कारक सृष्टि क्या सिर अपने धरा वबाल॥
अपन मग्न आनन्दमें उसमें व्यर्थ फिकर क्या लीना डाल।
हुआ फायदा क्या ईश्वर को फैलाया यह माया जाल॥
अगर कहाग ईश्वर न रच जग का हुनर दिखाया है।
में हूं ऐसा क्या गुणी जन मतो यह सब माया है॥
तब तो करतब उसई दिखाया खुदको जिसने बनाया है।

वडा घमण्डी म.न के मारे जग का जाल विछाया है ॥
किस कारन से दुनिया को रच किया ईशने प्रगट हुनर।
कर्ता वादी कहे जीव का कर्ता हर्ता परमेश्वर ॥ ९ ॥
कर्ता पनका कहा हाल अव हर्ता पन का सुनो जिकर।
अपने हाथ वनाकर वस्तु नहीं हरे कोई ज्ञानी नर ॥
अगर चतुर नर किसी वस्तु को वना वना दे खंडित कर
उसे कहे सव मूरख दुनिया यह तो आती साफ नजर ॥
लिख कर साफ इवारत जो मेटै अपने हाथ वसर।
समझो उसको गलत इवारत या कुछ उसमें रही कसर।
कहो जीव रचने में ईशने की गलती या भूला डगर।
या मूरख पन किया ईशने हरे जीव पैदा कर २ ॥
नहीं ईश्वर हरै किसी को दोष लगावे उसके सर।
कर्ता वादी कहैं जीवका कर्ता हर्ता परमेश्वर ॥ १०
करो झूठ अरु सच को निर्णय पक्षपात को तज गुणवान।
कर्ता पन में परमेश्वर के होता है सव भ्रष्ट जहान ॥
ईश्वर के सिर दोष लगै अति पापी कपटी अरु नादान।
तुम ईश्वर को दोष लगावो फिर वमते हो भक्त महान ॥
अरे भाई जो कर्म करोगे उसका फल भोगोगे आप।
कहे शास्त्र सुत करै भरै सुत वाप करै सो भोगे वाप ॥